# ज्योतिषशास्त्र सहायक

**व्यावसायिक पाठ्यक्रम स्तर 3.0**

**राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त**

**महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)**

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

**महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड**

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Phone : (0734) 2502266, 2502254, E-mail : msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in

# ज्योतिषशास्त्र सहायक

प्रधान सम्पादक

**प्रो. विरूपाक्ष वि. जड्डीपाल्**

**सचिव**

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

लेखक

डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा, ज्योतिषाचार्य

एम०ए०, एम० फिल०, पी०एचडी०(शैक्षिक सहायक)

प्रधान संयोजक

**डॉ.अनूप कुमार मिश्र**

सहायक निदेशक, प्रकाशन एवं शोध अनुभाग

आवरण एवं सज्जा : श्री शैलेन्द्र डोडिया

तकनीकी सहयोग : श्री हिमांशु देवड़ा

© महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जयिनी

ISBN :

मूल्य :

संस्करण :2025

प्रकाशित प्रति PDF

प्रकाशक : महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान

(शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार की स्वायत्तशासी संस्था)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Email: msrvvpujn@gmail.com, Web: msrvvp.ac.in

दूरभाष (0734) 2502255, 2502254

भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की पाठ्यचर्या एवं राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन का उद्देश्य शिक्षण विकास एवं प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षार्थियों का सर्वांगीण विकास कर रोजगार प्रदान करना है। महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन सदैव शैक्षिक नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर रहा है अतः आदर्श वेद विद्यालयों, पाठशालाओं एवं भारत के विद्यालयों में वैदिक कौशल विकास शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा अनेकानेक गतिविधियों के माध्यम से शिक्षार्थियों को रोजगार के अवसर प्रदान कर रहा है, जिससे शिक्षार्थी प्रशिक्षण के ज्ञानार्जन द्वारा स्वयं को अद्यतन एवं जागृत कर सकेंगे तथा इसके विषय ज्ञान का लाभ अपने दैनन्दिन जीवन के साथ-साथ आजीविका प्राप्त कर राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे।

ज्योतिषशास्त्र सहायक पाठ्यपुस्तक में इकाईयों के विषयों को विविध आयामों के साथ सहज एवं प्रभावी तरह से प्रस्तुत किया गया है लेकिन फिर भी कोई दोष हों तो हमें सूचित अवश्य करें क्योंकि हमारा परम उद्देश्य वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर वैदिक ज्ञान को कौशल विकास के माध्यम से जन-जन पहुँचाना है। अतः पाठ्य पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए विद्वानों के समस्त सुझावों का स्वागत है।

**महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन**

# प्राक्कथन

वेद ही सम्पूर्ण ज्ञान एवं विज्ञान के मूल स्रोत हैं। ज्ञान एवं विज्ञान के अध्ययन के लिए हमारे ऋषि-मुनियों नें ज्योतिष, कल्प, निरुक्त, शिक्षा, व्याकरण, छन्द आदि छः वेदाङ्गों की व्यवस्था की है। ज्योतिषशास्त्र कालविधान शास्त्र है और काल दो प्रकार का होता है। सृष्टि का संहार करने वाला एवं द्वितीय गणना करने वाला। गणना करने वाला काल भी पुनः दो प्रकार का होता है, पहला मूर्त्त( व्यावहारिक) एवं दूसरा सूक्ष्म होने से अमूर्त्तकाल ( अव्यवहारिक) होता है जैसा कि सूर्यसिद्धान्तकार ने कहा है-

**लोकानामन्तकृत् कालः कालोऽन्यः कलनात्मकः।**
**स द्विधा स्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्तश्चामूर्त उच्यते।। ( सूर्यसिद्धान्त1.10)**

वेद विहित यज्ञों का सम्पादन शुभ काल पर ही निर्भर है। जैसा कि आचार्य लग्ध के वचन हैं-

**वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः कालानुपूर्वा विहिताश्च यज्ञाः।**
**तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञम्॥** (आर्च ज्योतिषम् 36)

काल ही नहीं प्राणियों की उत्पत्ति से लेकर सम्पूर्ण विवेचन ज्योतिषशास्त्र के द्वारा किया जा सकता है। प्रथम इकाई में कौशल भारत मिशन एवं पुरोहित सहायक की भूमिका का परिचय। द्वितीय इकाई में कालविचार। तृतीय में सृष्ट्यारम्भकाल के सूक्ष्मातिसूक्ष्म कालमान से लेकर प्रलयान्तकाल पर्यन्त नवविधकालमान का विशाल ज्ञानभण्डार। चतुर्थ इकाई में वेद-विहित कार्य आधान काल से परलोक यात्रा पर्यन्त सभी क्रियाओं सम्पादन हेतु वैदिक मुहूर्त्त। पञ्चम इकाई में होराशास्त्र के परिज्ञान हेतु भाव तथा भावों के विषय विचार। षष्ठ इकाई में जीवन में उन्नति के समय के ज्ञान हेतु विविध राजयोगों का वर्णन। सप्तम इकाई में आयुविचार एवं रोग ज्ञान एवं अष्टम इकाई में समस्याओं के निराकरण हेतु कालसर्प दोष तथा सामान्य परिहार का विवेचन हेतु ज्योतिषशास्त्र सहायक की यह संग्राह्य पुस्तक प्रशिक्षणार्थियों के लिए ज्योतिष में प्रवेश के साथ-साथ उपर्युक्त विषयों में उद्यमिता प्राप्त कराने में भी अतीव सहायक होगी।

डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा

## विषयानुक्रमणिका


| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| **इकाई 1 : कौशल भारत मिशन एवं पुरोहित सहायक की भूमिका का परिचय** | **1-9** |
| 1.1. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन | 1 |
| 1.2. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन के उद्देश्य | 1 |
| 1.3. कौशल विकास और उद्यमशीलता मन्त्रालय | 1 |
| 1.4. मंत्रालय का उद्देश्य | 2 |
| 1.5. एनएसडीए की स्थापना | 2 |
| 1.6. राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद(एनसीवीईटी) | 3 |
| 1.7. एनसीवीईटी की विशेषताएँ | 3 |
| 1.8. राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीईटी) के उद्देश्य | 3-7 |
| 1.9. एनसीवीईटी के मुख्य कार्य | 8 |
| 1.10. ज्योतिषशास्त्र सहायक की भूमिका | 8-9 |
| **इकाई 2: कालविचार** | |
| 2.1 वैदिकवाङ्मय में ज्योतिष | 10-11 |
| 2.2 काल की ज्योतिषीय अवधारणा | 12 |
| 2.3 काल के भेद | 12-15 |
| **इकाई 3: नवविधकालमान** | **16-33** |
| 3.1 ब्रह्ममान | 16-19 |
| 3.2 दिव्यमान | 20 |

3.3 पित्र्यमान 21

3.4 प्राजापत्यमान 22

3.5 गौरवमान 22

3.6 सौरमान 23-24

3.7 सावनमान 25-26

3.8 चान्द्रमान 27

3.9 नक्षत्रमान 28

**इकाई 4: वैदिक प्रमुख मुहूर्त्त एवं ग्रहबल विचार 33-46**

4.1वैदिक प्रमुख मुहूर्त्त 33-34

4.2रौद्र मुहूर्त्त 35

4.3श्वेत मुहूर्त्त 35

4.4मैत्र मुहूर्त्त 35

4.5सारभट मुहूर्त्त 36

4.6सावित्र मुहूर्त्त 36

4.7 वैराज मुहूर्त्त- 36

4.8विश्वावसु मुहूर्त्त 36

4.9अभिजित्' मुहूर्त 36

4.10 रौहिण मुहूर्त्त 37

4.11 बल मुहूर्त्त 37

4.12 विजय मुहूर्त्त 37

4.13 नैर्ऋत मुहूर्त्त 37

4.14 वारुण मुहूर्त्त 38

4.15 सौम्य मुहूर्त्त 38

4.16 भग मुहूर्त्त 38

4.17 ग्रहबल विचार 38-46

**इकाई 5: भाव तथा भावों के विषय विचार** **47-56**

5.1 द्वादशभावों का परिचय 47-52

5.2 भावानुसार विषय अध्ययन 53

5.3 भावों कारक ग्रह 54-56

**इकाई 6: राजयोग** **57-66**

6.1 पञ्चमहापुरुषयोग एवं उनके फल

6.2 सुनफा

6.3 अनफा

6.4 दुरुधरा

6.5 केमुद्रम योग तथा उनके फल

6.6 केमुद्रम भंग योग

6.7 अधियोग

6.8 अल्पमध्यमोत्तम योग एवं फल

6.9 धनयोग

6.10 गजकेशरी योग एवं फल

6.11 अमलायोग एवं फल

6.12 सूर्य व लग्नाधि योग विचार

6.13 शुभवेसी योग

6.14 शुभवासि

6.15 उभयचरी योग

6.16 पापवेसी योग

6.17 पापवासि

6.18 पाप उभयचरी योग और उनके फल

6.19 शुभ कर्त्री योग

6.20 सुशुभयोग

6.21 पाप कर्त्री योग

6.22 सुशुभयोग तथा उनके फल

6.23 सरस्वती योग एवं इसके फल

**इकाई 7 : आयुर्विज्ञान** 67-87

7.1 आयुविचार

7.2 कालपुरुष के अनुसार रोगनिर्णय

7.3 भावानुसार रोग विचार

7.4 ग्रहों के अनुसार रोग निर्णय

7.5 रोग एवं मृत्यु के कारण

7.6 रोग समय ज्ञान

7.7 कष्टकारी रोग

7.8 मृत्यु जनित रोग

7.9 मेषादि द्वादश राशिजन्य दोष

7.10 रोग निराकरण के सामान्य उपाय

7.11 पञ्च महाभूत विचार रोगानुसार ग्रहों के रसविचार

**इकाई 8: कालसर्प योग** 88-101

8.1 कालसर्प योग

8.2 काल सर्प योग का सामान्य परिहार

।।श्रीः।।

# इकाई 1 : कौशल भारत मिशन एवं पुरोहित सहायक की भूमिका का परिचय

**1.1. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन** – 15 जुलाई, 2015 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने राष्ट्रीय कौशलभारत मिशन का शुभारंभ किया। कुशल भारत, भारत सरकार की एक पहल है जो कौशल प्रशिक्षण के द्वारा देश के युवाओं का व्यक्तिगत विकास कर उनको सशक्त उद्यमी और अधिक उद्यमशील बनाकर उनका तथा देश के आर्थिक विकास को उन्नत करके कुशल भारत और समृद्ध भारत बनाने के लिए शुरू किया गया है। राष्ट्रीय कौशल मिशन के अध्यक्ष माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी हैं।

भारत की 65% युवा आबादी को कौशल विकास के माध्यम से उद्यमशील बनाकर देश को एक वैश्विक शक्ति बना सकते हैं। अतः कुशल भारत सम्पूर्ण देश के 40 क्षेत्रों में पाठ्यक्रम प्रदान करता है जो राष्ट्रीय कौशल अर्हता मानक के तहत उद्योग और सरकार दोनों द्वारा मान्यता प्राप्त मानकों सहित हैं। यह पाठ्यक्रम एक शिक्षार्थी को कार्य के व्यावहारिक समन्वय के साथ-साथ उसको तकनीकी रूप से उद्यम करने में सक्षम बनाता है।

## 1.2. राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन के उद्देश्य

- कौशल विकास का उद्देश्य युवाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण के द्वारा आजीविका प्रदान करना है।
- यह कौशल औपचारिक शिक्षा के साथ कौशल प्रशिक्षण के द्वारा उद्यमिता क्षमता में गुणवत्तापूर्ण परिणाम लाता है।
- कौशल विकास राष्ट्रीय मानकों के तहत प्रौद्योगिकी के माध्यम से कार्य क्षमता को बढ़ाना है।
- युवाओं का व्यक्तिगत विकास के साथ- साथ देश की आर्थिक वृद्धि को शिखर पर ले जाना है।

## 1.3. कौशल विकास और उद्यमशीलता मन्त्रालय-

कौशल विकास के द्वारा युवाओं की आजीविका क्षमता को बढ़ाने हेतु केन्द्र सरकार ने कौशल विकास एवं उद्यमशीलता मंत्रालय (एमएसडीई) का 26 मई 2014 को गठन किया। यह मन्त्रालय कौशल विकास के समस्त प्रयासों का समन्वय करने, कुशल जनशक्ति की मांग और आपूर्ति के बीच के अन्तर को दूर करने, व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण ढांचे का निर्माण करने, कौशल उन्नयन करने, न केवल मौजूदा

रोजगारों हेतु, बल्कि सृजित की जाने वाली नौकरियों के लिए भी नए-नए कौशलों का निर्माण करने के लिए अहर्निशम प्रयासरत है।

1.4. **मंत्रालय का उद्देश्य**- 'कुशल भारत' के दृष्टिकोण के लक्ष्यों को प्राप्त करने और उच्च मानकों के साथ बड़े पैमाने पर कुशल बनाना है। इन पहलों में इसकी सहायता करने के लिए निम्न संस्थाएँ कार्यरत हैं - प्रशिक्षण महानिदेशालय (डीजीटी), राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीईटी), राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी), राष्ट्रीय कौशल विकास निधि (एनएसडीएफ़) और 37 क्षेत्र कौशल परिषदें (एसएससी) के साथ-साथ 33 राष्ट्रीय कौशल प्रशिक्षण संस्थान [एनएसटीआई/एनएसटीआई (महिला)], डीजीटी के अंतर्गत लगभग 15000 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (आईटीआई) और एनएसडीसी के साथ 187 प्रशिक्षण भागीदार पंजीकृत हैं। मंत्रालय ने कौशल विकास केंद्रों, विश्वविद्यालयों और इस क्षेत्र के अन्य गठबन्धनों के साथ कार्य कर रहा है। इनके अतिरिक्त, संबंधित केंद्रीय मन्त्रालयों, राज्य सरकारों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, उद्योग एवं गैर-सरकारी संगठनों के साथ कौशल विकास को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए कार्य कर रहा है तथा देश के कार्यबल को पुन: सुदृढ़ और सक्रिय कर रहे हैं; तथा युवाओं को घरेलु उद्यमों से लेकर अंतरराष्ट्रीय रोजगार और विकास के हेतु तैयार कर रहें हैं।

1.5 **एनएसडीए की स्थापना**- जून 2013 में सरकार और निजी क्षेत्र के कौशल विकास प्रयासों में समन्वय एवं सामंजस्य स्थापित करने तथा राष्ट्रीय कौशल योग्यता ढांचे (एनएसक्यूएफ) को संचालित करने के लिए की गई थी, जिससे कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि गुणवत्ता और मानक क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। इसके अतिरिक्त एकल एकीकृत योग्यता-आधारित ढांचे को अधिसूचित किया गया, राष्ट्रीय कौशल योग्यता ढांचे (एनएसक्यूएफ) को 27 दिसंबर 2013 को अधिसूचित किया गया। परन्तु इनमें अनेक हितधारक विभिन्न मानकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे थे, जिनमें मूल्यांकन और प्रमाणन प्रणालियों की बहुलता थी, जो तुलनीय नहीं थे, तथा इससे व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रणाली पर गंभीर प्रभाव पड़ रहा था, तथा इस प्रकार देश के युवाओं की रोजगार क्षमता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड रहा था। व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रणाली और देश के युवाओं की रोजगार क्षमता पर भी प्रतिकूल प्रभाव न पड़े इसलिए राष्ट्रीय

व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीटी) की स्थापना हुई। जो 1956 के एक प्रस्ताव के माध्यम से औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों (आईटीआई) को विनियमित करने के लिए की गई थी, जो दीर्घकालिक प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। अल्पकालिक कौशल पारिस्थितिकी तंत्र को राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी), सेक्टर कौशल परिषदों (एसएससी), कौशल विकास मंत्रालय और अन्य कौशल मंत्रालयों के माध्यम से विनियमित किया गया।

**1.6राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद(एनसीवीईटी) -** राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद की स्थापना भारत सरकार द्वारा 05 दिसंबर, 2018 के माध्यम से पूर्ववर्ती राष्ट्रीय कौशल विकास एजेंसी (एनएसडीए) और राष्ट्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीटी) के कार्यों एवं जिम्मेदारियों को समाहित करके एक नियामक निकाय के रूप में की गई है और इसे 1 अगस्त 2020 से प्रारंभ कर मानकों को स्थापित करने, व्यापक नियमों को विकसित करने और व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल पारिस्थितिकी संस्थाओं, मूल्यांकन एजेंसियों और कौशल सूचना प्रदाताओं को मान्यता देने और उनके कामकाज की निगरानी करना है।

यह एक व्यापक राष्ट्रीय विनियामक के रूप में कार्य करता है, जिसका कार्य व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण एवं कौशल (वीईटीएस) पारिस्थितिकी तन्त्र के लिए मानक स्थापित करना तथा व्यापक विनियम एवं दिशानिर्देश तैयार करना है, साथ ही सभी स्तरों पर शैक्षणिक शिक्षा में इसके एकीकरण को सुनिश्चित करना है। इसकी भूमिका मजबूत उद्यमिता सहभागिता सुनिश्चित करना तथा गुणवत्ता बढ़ाने और उच्च परिणाम प्राप्त करने के उद्देश्य से बहु-स्तरीय विनियमों को लागू करना है।

राजपत्र अधिसूचना के अनुसार 5 दिसंबर, 2018 राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषद के रूप में गठित परिषद का नेतृत्व अध्यक्ष करता है और इसमें अध्यक्ष के अतिरिक्त, दो (2) कार्यकारी सदस्य, तीन (3) गैर-कार्यकारी सदस्य और एक (1) मनोनीत सदस्य होता है। इन सदस्यों का चयन कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता वाली खोजसह चयन समिति की सिफारिशों के आधार पर किया जाता है, यही आम सभा में भी शामिल होते है, जिसकी अध्यक्षता कौशल विकास एवं उद्यमिता मंत्रालय (एमएसडीई) के मंत्री करते

हैं और एनसीवीईटी को समग्र मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए राज्यों और उद्योग के प्रतिनिधि शामिल होते हैं।

### 1.7 एनसीवीईटी की विशेषताएँ

- कौशल पारिस्थितिकी तंत्र में लगे निकायों के कामकाज के लिए एक समान मानक बनाने हेतु दिशानिर्देश तैयार करने तथा उनकी निगरानी और पर्यवेक्षण के लिए तंत्र विकसित करने के लिए एक एकल नियामक निकाय की आवश्यकता महसूस की गई, जिससे कौशल में गुणवत्ता सुनिश्चित हो सके।
- खंडित विनियामक प्रणाली को एकीकृत करना और व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल मूल्य श्रृंखला में गुणवत्ता आश्वासन को शामिल करना है। इस दृष्टिकोण का उद्देश्य उच्च-स्तरीय कौशल वाले कार्यबल का निर्माण करना, रोजगार क्षमता में सुधार करना और भारतीय अर्थव्यवस्था के तेज़ विकास में योगदान देना और भारत को दुनिया की कौशल राजधानी बनाना है। एनसीवीईटी यह सुनिश्चित करने के लक्ष्य के साथ काम करता है कि भारत में व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल (वीईटीएस) उच्च गुणवत्ता वाले हों, उद्योग की ज़रूरतों को पूरा करें और सभी के लिए सुलभ हों।
- सहायक विनियामक ढाँचा स्थापित करने के अलावा, एनसीवीईटी ने अपने अधिकार क्षेत्र में विभिन्न दिशा-निर्देश और नीतियाँ तैयार और अधिसूचित की हैं। इनमें व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल (VETS) मूल्य श्रृंखला में आवश्यक प्रक्रियाएँ और हितधारक शामिल हैं, जिनका उद्देश्य गुणवत्ता को बनाए रखना है। इन पहलों का उद्देश्य व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल ढाँचों और प्रक्रियाओं के लचीलेपन को बढ़ाना, उद्योग और व्यापक कौशल पारिस्थितिकी तंत्र की उभरती ज़रूरतों को पूरा करने के लिए उनकी प्रभावशीलता और दक्षता को बढ़ाना है, साथ ही राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और राष्ट्रीय ऋण ढाँचे (NCF) के अनुरूप सरकार के व्यापक दृष्टिकोण में योगदान देना है।

### 1.8 राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीवीईटी) के उद्देश्य-

- माननीय प्रधानमंत्री के विजन के साथ संरेखित करना।
- व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण में उत्कृष्टता और नवीनता सुनिश्चित करके भविष्य के कार्यबल को सशक्त बनाना है, जिससे कि व्यक्ति अपनी पूर्ण क्षमता प्राप्त कर सकें और वैश्विक अर्थव्यवस्था की गतिशील आवश्यकताओं को पूरा कर सकें।
- व्यावसायिक प्रशिक्षण और शिक्षा के लिए मजबूत मानकों और गुणवत्ता ढांचे की स्थापना और क्रियान्वयन करके भारत में एक सुसंगत, सुसंगत और एकीकृत कौशल विकास पारिस्थितिकी तंत्र बनाना है, ताकि देश में संपूर्ण व्यावसायिक शिक्षा प्रशिक्षण और कौशल (वीईटीएस) प्रणाली और मूल्य श्रृंखला में स्थिरता, जवाबदेही और उत्कृष्टता सुनिश्चित की जा सके और बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा सकें और भारत को 'विश्व की कौशल राजधानी' बनाया जा सके।
- सशक्तिकरण, परिवर्तन, उत्कृष्टता और नवाचार पर जोर देता है, कौशल बढ़ाने, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने और उद्योग की आवश्यकताओं को पूरा करने के लक्ष्यों के साथ संरेखित करता है, जो उद्योग की जरूरतों के अनुरूप कार्यबल को प्रशिक्षित करके उद्योग की आवश्यकताओं को पूरा करता है, जिससे कार्यबल की रोजगार क्षमता में सुधार होता है और देश के आर्थिक विकास में योगदान मिलता है। यह वैश्विक नौकरी बाजार के लिए व्यक्तियों को तैयार करने के महत्व पर भी प्रकाश डालता है, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय रोजगार प्रवृत्तियों और जरूरतों को संबोधित करता है।
- व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण के क्षेत्र में मान्यता, विनियमन और निगरानी के लिए गतिशील, गुणवत्ता-केंद्रित प्रणालियाँ स्थापित करना है।
- सम्पूर्ण देश में उच्च गुणवत्ता वाली व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल प्रदान करना। यह सुनिश्चित करता है कि बुनियादी ढांचा, प्रशिक्षक, पाठ्यक्रम और सामग्री उद्योग की मांगों को पूरा करती है।
- आजीवन सीखने के अवसर पैदा करना, व्यक्तियों को रोजगार और उद्यमिता के लिए आवश्यक कौशल और योग्यता प्रदान करना।

- प्रशिक्षण, मूल्यांकन और प्रमाणन के लिए मानक और दिशा-निर्देश निर्धारित करने, व्यावसायिक शिक्षा को उद्योग की जरूरतों के साथ जोड़ने और निरंतर और आजीवन सीखने और कौशल विकास को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है।
- उद्योग और अर्थव्यवस्था की उभरती जरूरतों के लिए प्रासंगिकता बनाए रखना और इसकी रणनीति को रेखांकित करता है।
- भारत को "विश्व की कौशल राजधानी" के रूप में स्थापित करने के लिए, युवाओं को वैश्विक रूप से मानक कौशल से लैस करने पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। यह पहल पूर्ण जनसांख्यिकीय लाभांश की प्राप्ति और 'आत्मनिर्भर भारत' के क्रियान्वयन का समर्थन करती है।
- वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता: सभी स्तरों पर वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी कुशल कार्यबल का विकास करना, वर्तमान और भविष्य की कौशल आवश्यकताओं और वैश्विक कार्यबल की आवश्यकताओं को संबोधित करते हुए कौशल भारत पहल के तहत राष्ट्रीय कौशल योग्यता फ्रेमवर्क (एनएसक्यूएफ) के साथ व्यावसायिक और कौशल शिक्षा को संरेखित करना।
- गतिशील संरेखण: उभरते उद्योग की जरूरतों को पूरा करने के लिए एनएसक्यूएफ को समायोजित करना, युवाओं को सशक्त बनाना और कौशल, अपस्किलिंग, री-स्किलिंग और पूर्व शिक्षण की मान्यता (आरपीएल) के माध्यम से कार्यबल उत्पादकता को बढ़ाना।
- आकांक्षी व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण (VET) को एक सम्मानित, आजीवन कैरियर विकल्प के रूप में आगे बढ़ाना, तथा इसे मुख्यधारा की शिक्षा के साथ एकीकृत करना, ताकि व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ जुड़ी सामाजिक पदानुक्रम को समाप्त किया जा सके।
- आकांक्षी व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण (VET) को एक सम्मानित, आजीवन कैरियर विकल्प के रूप में आगे बढ़ाना, तथा इसे मुख्यधारा की शिक्षा के साथ एकीकृत करना, ताकि व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ जुड़ी सामाजिक पदानुक्रम को समाप्त किया जा सके।
- एकीकृत शिक्षा प्रणाली: व्यावसायिक शिक्षा प्रणाली (वीईटीएस) को स्कूल, उच्च, तकनीकी और विश्वविद्यालय शिक्षा के साथ मिलाना।

- क्षैतिज और ऊर्ध्वाधर गतिशीलता, जिससे कई प्रवेश और निकास बिंदु सक्षम होते हैं। विश्लेषण, मूल्यांकन, संश्लेषण, रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच, समस्या समाधान और नवाचार जैसे उन्नत कौशल पर विशेष जोर देंना।
- राष्ट्रीय ऋण ढांचा: व्यावसायिक और सामान्य शिक्षा क्षेत्रों के बीच प्रशिक्षुओं की गतिशीलता में सुधार करने के लिए एक मजबूत राष्ट्रीय ऋण ढांचा विकसित और कार्यान्वित करना।
- परिणाम-केंद्रित कौशल से रोजगार, स्वरोजगार, उद्यमशीलता और विदेश में नौकरी के अवसरों को बढ़ावा देता है।
- कौशल प्रणाली की अखंडता, पारदर्शिता और दक्षता सुनिश्चित करने, स्वायत्तता, सुशासन और सशक्तिकरण के माध्यम से नवाचार और रचनात्मक समाधान को बढ़ावा देने के लिए एक "हल्का लेकिन सख्त" नियामक ढांचा लागू करना।
- उद्योग और कौशल परिवेश की गतिशील आवश्यकताओं के अनुरूप उनकी प्रभावकारिता और अनुकूलनशीलता को बढ़ाने के लिए कौशल रूपरेखा और प्रक्रियाओं में सुधार करना।
- बहु-कौशल और अंतर-क्षेत्रीय कौशल को बढ़ावा देने के लिए उद्योग 4.0 सहित उभरती प्रौद्योगिकियों और भविष्य के कौशल में कौशल की पहचान करना और सुविधा प्रदान करना, कार्यबल की रोजगार क्षमता और कमाई की क्षमता में सुधार के लिए अंतर्राष्ट्रीय नौकरी बाजारों के साथ संरेखित करना।
- पारंपरिक कौशल के द्वारा योग्यताएँ, राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक (एनओएस) और माइक्रो-क्रेडेंशियल्स (एमसी) विकसित करना, जो क्षेत्रीय योग्यता ढांचे के साथ-साथ विरासत ज्ञान और पारंपरिक भारतीय कौशल, जैसे हस्तशिल्प और हथकरघा को शामिल करते हैं।
- मिश्रित शिक्षा, कौशल और मूल्यांकन के तरीकों को बढ़ावा देना
- जहां संभव हो, पहुँच का विस्तार करना, लागत कम करना, सीखने के संसाधनों को मानकीकृत करना, और तेजी से और प्रभावी व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण वितरण के लिए उच्च गुणवत्ता वाली ई-सामग्री सुनिश्चित करना एनसीवीईटी भारत में व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल पारिस्थितिकी तंत्र के विकास और गुणात्मक सुधार के लिए एक सक्षम नियामक वातावरण बनाना।

## 1.9. एनसीवीईटी के मुख्य कार्य --

- मूल्यांकन एजेंसियों (एए) और कौशल सम्बन्धित सूचना प्रदाताओं (एसआईपी) को मान्यता देना, अनुशासन सुनिश्चित करना और उनका विनियमन करना।
- राष्ट्रीय कौशल योग्यता ढांचे (एनएसक्यूएफ) को स्थापित करना, एम योग्यता रजिस्टर (एनक्यूआर) को बनाए रखना
- एनएसक्यूएफ संरेखित योग्यता और राष्ट्रीय व्यावसायिक मानकों और माइक्रो क्रेडेंशियल्स (एमसी) का अनुमोदन, जो कि सेक काउंसिल (एसएससी) सहित पुरस्कार देने वाली निकायों द्वारा विकसित करना।
- अनुसंधान एवं सूचना प्रसार और मान्यता प्राप्त संस्थाओं की निगरानी, मूल्यांकन और पर्यवेक्षण।
- एमएसडीई के परामर्श से बीओ मूल्यांकन एजेंसियों के रूप में कौशल विश्वविद्यालयों के लिए विनियम तथा दिशानिर्देश स्थापित करना।
- व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों के अप्रत्यक्ष विनियमन के लिए दिशानिर्देश स्थापित करना।
- विभिन्न हितधारकों की समस्याओं का निवारण।

## 1.10 ज्योतिषशास्त्र सहायक की भूमिका-

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) शिक्षा के लिए एक ऐसा पाठ्यक्रम अनिवार्य करती है जो शिक्षार्थियों के समग्र विकास के लिए अनुकूल हो। नीति में शिक्षार्थियों को आजीवन सीखने और कक्षा की सीमाओं को पार करने के बाद अर्जित किए गए कौशल एवं प्रशिक्षण से आजीविका प्राप्त करने की परिकल्पना की गई है जैसे – **कौशल भारत योजना**। इसमें यह आवश्यक हो जाता है कि पाठ्यक्रम शिक्षार्थियों को उस संदर्भ और समाज को समझने का अवसर प्रदान करे, जिसमें वे वर्तमान में रह रहे हैं और साथ ही भविष्य की माँगों को भी पूर्ण कर सकें। इस संदर्भ में **ज्योतिषशास्त्र सहायक पाठ्यक्रम** का उद्देश्य अनुभवात्मक शिक्षा के माध्यम से शिक्षार्थियों को सक्रिय, देखभाल करने वाले और दयालु सहायक के रूप में विकसित करने के लिए सशक्त बनाना है।

**पाठ्यक्रम के उद्देश्य-**

- ज्योतिषशास्त्र शिक्षार्थियों के बौद्धिक, व्यक्तिगत, सामाजिक और भावनात्मक विकास में भी सहायता करेगा।
- शिक्षार्थियों को रचनात्मक और आलोचनात्मक रूप से सोचने, सहयोगात्मक रूप से काम करने, समस्याओं को हल करने के लिए समाज और साथियों के साथ संवाद करने का अवसर प्राप्त होगा।
- पाठ्यक्रम छात्रों के तथा समाज के मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक स्वास्थ्य पर ध्यान केन्द्रित करेगा।
- छात्रों को उनके स्वास्थ्य और शारीरिक उर्जा को बेहतर बनाने में मदद करेगा।

**मुख्य विशेषताएँ-**

- यह पाठ्यक्रम काल की ज्योतिषीय अवधारणा और राजयोग, सम्बन्धित गतिविधियों को करने के लिए आवश्यक मूलभूत कौशल विकसित करने में मदद करेगा।
- यह पाठ्यक्रम शुभाशुभ सूर्यादि दशाविचार, राजयोग विश्लेषणात्मक, बीमारी जैसी समस्याओं के समय का पूर्वानुमान की योग्यता और कौशल सिखाने पर अधिक जोर देगा।

**कैरियर के अवसर-**

ज्योतिषशास्त्र कनिष्ठ सहायक कौशल प्रशिक्षण के साथ दसवीं कक्षा पूरी करने पर यह पाठ्यक्रम छात्रों को अपनी शिक्षा को अद्यतन करने, सामान्य मुहूर्त्त निर्णय, रोग निर्णय, व्यक्ति विशेष के रोग का पूर्वानुमान करने, और कालज्ञान से स्थानान्तरण व राजयोग के क्षेत्रों में काम करने की दक्षता प्रदान करेगा।

**सक्रिय गतिशीलता-**

इस पाठ्यक्रम में भाग लेकर छात्र विभिन्न संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों के ज्योतिष, स्वास्थ्य विभाग तथा समाज के लिए सहायक होंगे।

## इकाईः2, कालविचार

### 2.1 वैदिकवाङ्मय में ज्योतिष -

सम्पूर्ण विश्व में ज्ञानपीठ के रूप में प्रसिद्ध है यह तप की भूमि भारतवर्ष में ऋषियों ने अनेक शास्त्रों की रचना की थी। उन सभी शास्त्रों में सर्व प्राचीन शास्त्र ज्ञानभण्डार की जो प्रसिद्धि है, वह अपौरुषेय वेदों की ही है। हमारे वैज्ञानिक भी वेदों में विद्यमान ज्ञानराशि को स्वीकार करते हैं। मनु ने कहा है कि - **स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः** (मनु.2.7)। उस ज्ञानकोश रूपी वेद के अर्थाववोध के लिए तथा स्वरादि के अवगमन और विनियोग ज्ञान के लिए कुछ सहायक ग्रन्थों की अतीव आवश्यकता थी। उस ज्ञान की पूर्ति के लिए ही वेदाङ्गों की रचना मुनियों ने की होगी।

यथा- **निरुक्तं-व्याकरणं- कल्पो-शिक्षाछन्दसां चयः।**

**ज्योतिषामयनं चैव वेदाङ्गानि षडेव तु।।**

लगधमुनि प्रणीत वेदाङ्गज्योतिषशास्त्र-वसिष्ठ- काश्यप-पराशर-गर्ग- नारदादि आचार्यों के मौलिक संहिता ग्रन्थ उपलब्ध हैं। लगधमुनि के उपदेश स्वरूप वेदाङ्गज्योतिषशास्त्र के चार भेद हैं- यथा- ऋग्ज्योतिष, यजुर्ज्योतिष, सामज्योतिष एवं अथर्ववेद ज्योतिष। ऋग्वेदज्योतिष में लगधमुनि द्वारा रचित 63 कारिका, यजुर्वेद ज्योतिष में 49 कारिका, अथर्ववेद ज्योतिष में 162 कारिका व 14 प्रकरण उपलब्ध होते हैं। ऋग्वेदज्योतिष और यजुर्वेद ज्योतिषशास्त्र का प्रयोजन तो सिद्धान्त रूपी कालज्ञान द्वारा पर्वों का ज्ञान कराना है। वही अथर्वेद ज्योतिष का उद्देश्य संहिता एवं होरा द्वारा चराचर जगत का फलादेश करना हैं।

वेदाङ्गों में वेद विहित यागादि क्रियाकलापों के निर्वहण के लिए वेदाङ्ग ज्योतिषशास्त्र में उचित काल निर्देशित है। पुनः काल की परिकल्पना हम ज्योतिषशास्त्र के विना कर भी नहीं सकते। **भास्कराचार्य ने स्वकीय सिद्धान्तशिरोमणि** में कहा है कि यज्ञ इत्यादि में समय बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और वह काल ज्योतिषशास्त्र का विषय है। अतः कालविधानशास्त्र के रूप में इसकी प्रसिद्धि है। यथा–

**वेदास्तावद्यज्ञकर्मप्रवृत्ता यज्ञाः प्रोक्तास्ते तु कालाश्रयेण।**

**शास्त्रादस्मात् कालबोधो यतः स्याद्वेदाङ्गत्वं ज्यौतिषस्योक्तमस्मात्।।** (सि.शि. 1.9)

वेदों में काल ज्ञापकशास्त्र का स्थान लगधाचार्य ने वेदाङ्गज्योतिष में वर्णन किया है यथा -

**यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।**

**तद्वेदाङ्गशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्ध्नि संस्थितम्।।**

नेत्र रूपी ज्योतिश्शास्त्र समय ज्ञान हेतु ही अलङ्कृत है। जैसा कि नारद संहिता में भी वर्णन है-

**"वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिश्शास्त्रमकल्मषम् ।**

**विनैतदखिलं कर्म श्रौतं स्मार्त्तं न सिद्ध्यति ।।"**

उन छः अङ्गों में ज्यौतिश्शास्त्र दिक्, देशकाल, यज्ञ तप, दान ,व्रत ,और उपवासादि बीज है। अतः इसका अध्ययन ,अध्यापन , संशोधन, संरक्षण एवं संवर्धन आवश्यक है। जहाँ सभी वेदवाङ्मयादि का एक ही सिद्धान्त है कि सभी लोगों को यज्ञ, दान, व्रत, और उपवासों के द्वारा ईश्वर की उपासना करनी चाहिए। अतः यज्ञ और सोलह संस्कारों की सफलता के लिए प्रारब्ध शास्त्र ज्योतिषशास्त्र ही है। जो ज्योतिष के काल को जानता है वही यज्ञ को समझने में सक्षम है। जैसा कि लगधमुनि ने वेदाङ्गज्योतिष में कहा है -

**"ज्योतिषमयनं पुण्यं प्रवक्ष्याम्यनुपूर्वशः।**

**सम्मतं ब्रह्मणेन्द्राणां यज्ञकालार्थसिद्धये।।" याजुषज्योतिषम् 2**

**"वेदाः हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ता कालानुपूर्वविहिताश्च यज्ञाः।**

**तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं स वेद यज्ञम्।।"-याजुषज्योतिषम् 3**

कालमान- सृष्टि को गति प्रदान करने का आधार स्तम्भ काल ही है। मुहूर्त्त से लेकर सभी शुभाशुभ कर्म काल (समय) पर ही निर्भर करते हैं। काल दो प्रकार का होता है।

(1) अन्तकृत काल - सृष्टि का संहार करने वाला

(2) कलनात्मक - काल गणना करनेवाला होता है।

अन्तकृत काल सृष्टि का संहार करने वाला अर्थात् पञ्चमहाभूतों से उत्पन्न परमाणुओं को पुनः पञ्चमहाभूतों में परिवर्तन जैसा भगवान् श्रीकृष्ण ने स्वयं कहा है- **कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः ।**(भ.गी.11.32) तथा इसी प्रकार विष्णुपुराण में वर्णन है- **ब्रह्मा दक्षादयः कालस्तथैवाखिलजन्तवः। विभूतयो हरेरेता जगतः सृष्टिहेतवः ॥ विष्णुर्मन्वादयः कालः सर्वभूतानि च द्विज। स्थितेनिमित्तभूतस्य विष्णोरेता विभूतयः ॥ रुद्रः कालोऽन्तकाद्याश्च समस्ताश्चैव जन्तवः। चतुर्धा प्रलयायैता जनार्दनविभूतयः॥**( विष्णुपुराण (1.22)

यथा- आर्ष वचन- **कालः सृजति भूतानि कालः संहरति प्रजाः।**

इस प्रकार सृष्टि से लेकर प्रलय पर्यन्त समय का आंकलन जैसे-सौर, सावन, चान्द्र, नाक्षत्र आदि नवविध काल मानों के ज्ञान का विधान तथा व्यक्त-अव्यक्त गणित के विचार का ज्ञान जिससे किया जाता है उसे सिद्धान्त स्कन्ध कहते हैं तथा गणित से ग्रहगति का निर्णय होने के कारण इसे तन्त्र भी कहा जाता है।

**2.2 काल की ज्योतिषीय अवधारणा-**

**कालः पचति भूतानि, कालः संहरति प्रजाः( श्वेताश्वेत.1.1)** उपनिषद् वचन के अनुसार संसार में काल के विना कुछ भी सम्भव नहीं है। काल के प्रभाव से ही प्रकृति की सम्पूर्ण घटनाएँ घटित होती हैं। वस्तु, पदार्थ, व्यक्ति, विचार, भाव, जीव और जड सभी पर सदैव समय का प्रभाव पड़ता है। यह तो सदा अपनी स्व गति के अनुसार चलता रहता है। जैसे- दिन-रात, मास, पक्ष, ऋतु, संवत्सरादि का ज्ञान ज्योतिषीय काल पर ही आधारित है। कर्मप्रधान जगत में यह काल स्वकर्म से विरक्त नहीं होता। इसके आद्य एवं अन्त के ज्ञान को समझना कठिन तपस्या का फल है। पृछक जब प्रश्न करता है उस समयानुसार ही दैवज्ञ प्रश्न लग्नादि को संसोध्य सुख-दुख हेतु के कारक व्यवहार योग्य काल का निर्देश देता है। जैसा कि श्वेताश्वेतरोपनिद् में वर्णन है-

**कालः स्वभावो नियतिर्यदृच्छा भूतानि योनि पुरुष इति चिन्त्यम्।**

**संयोग एषां नत्वात्मभावादात्माप्यऽनीशः सुखदुःखहेतोः।।**(1.1)

कालः पचति भूतानि कालः संहरते प्रजाः।

कालः सुप्तेषु जागर्ति कालो हि दुरतिक्रमः ॥ (चा. नी.7 )

- **कलनात्मककाल**- समय सूचक एवं गणना करनेवाले (सृष्टि के कारक) को **कलनात्मककाल कहते** हैं अर्थात् वैदिक समय का आंकलन करना तथा पुनः इसको दो भागों में विभाजित किया गया है यथा- प्रथम स्थूल होने से **मूर्त संज्ञक काल** (व्यावहारिक) समय की गणना करने वाली मूल इकाई है। और द्वितीय सूक्ष्म होने से **अमूर्त संज्ञक** (अव्यवहारिक) होता है। जैसा कि सूर्यसिद्धान्त में वर्णित है। यथा-

**लोकानामन्तकृत् काल: कालोऽन्य: कलनात्मक:।**

**स द्विधा स्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्तश्चामूर्त उच्यते ॥ ( सू.सि.म.10)**

**2.3. काल के भेद-**

**(अ) स्थूलकाल (मूर्तकाल)-** पहला स्थूल होने से मूर्त संज्ञक (व्यावहारिक) समय की गणना करने वाली मूल इकाई है। एक प्राण एक स्वस्थ व्यक्ति के श्वांस लेने एवं छोड़ने का का समय 10 दीर्घ अक्षरों का उच्चारण काल 10 विपल= 4 सैकण्ड होता है और छः प्राण की एक विनाड़ी (पल), 60 विनाडी (पल) की एक नाडी (घटी)। 60 घटी का एक नाक्षत्र अहोरात्र होता है। 30 अहोरात्र का एक मास होता है और दो सूर्योदय के मध्य का समय सावन दिन होता है।

**गुर्वक्षरैः खेन्दुमितैरसुस्तैः षड्भिः पलं तैर्घटिका खड्भिः।**

**स्याद्वा घटीषष्टिरहः खराभैर्मासो दिनैस्तैर्द्विकुभिश्च वर्षम्।।( सि.शि.17)**

**प्राणादि: कथितो मूर्तस्त्रुट्याद्योऽमूर्तसंज्ञक:।**

**षड्भि: प्राणैर्विनाडीस्यात्तत्षष्ठ्या नाडिका स्मृता ॥**

**नाडीषष्ठ्या तु नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम्।**

**तत् त्रिंशता भवेन्मास: सावनोऽर्कोदियैस्तथा ॥ ( सू.सि.म.11-12)**

**(आ) सूक्ष्मकाल-** सुई से कमल के पत्ते में छेद करने पर लगने वाले समय को सूक्ष्मकाल कहते हैं यथा- नेत्रों के पलक झपकने के समय को निमेष, निमेष के तीसवें भाग को तत्पर, तत्पर के सौवें भाग को त्रुटि कहते हैं अर्थात् निमेष के तीन हजार वां भाग त्रुटि, 18 निमेष का काष्ठ, 30 काष्ठ की एक कला, 30 कला की एक घटी, 2घटी का एक शुभक्रियायोग्यकाल मुहूर्त्त एवं 30 मुहूर्त्त का एक दिन होता है। इसी काल के द्वारा वैज्ञानिक आकाशीय घटनाओं पर शोध करते हैं।

**सूच्या भिन्ने पद्मपत्र त्रुटिरित्यभिधीयते**

**योऽक्ष्णोर्निमेषस्य खरामभागः स तत्परस्तच्छतभाग उक्ता।**

**त्रुटिनिर्मेषैर्धृतिभिश्च काष्ठा तत्त्रिंशता सद्गणकैः कलोक्ता।**

**त्रिंशत्कलाक्षी घटिका क्षणः स्याश्नाडीद्वयं तै। खगुणैदिनं च।। (सि.शि.16)**

**इकाई का सारांश-** ज्योतिषशास्त्र का प्रमुख अंश है काल निरूपण। काल की प्रधान्याता के कारण इसको कालविधायक शास्त्र भी कहा जाता है। उसके अनुसार कार्य का सुभारम्भ शुभसमय में किया जाए तो उसमें सिद्धि प्राप्त होती है अन्यथा हानि। अतएव शुभ समय ज्ञान के लिए प्राचीन राजाओं के शासन काल में भी

उनकी राजसभा में दैवज्ञ विराजमान रहते थे और राजा भी उनके निर्देशानुसार कार्य करते थे। जैसा कि वराहमिहिर ने बृहसंहिता में दैवज्ञ रहित राजा की स्थिति का वर्णन किया है कि –

**अप्रदीपा यथा रात्रिरनादित्यं यथा नभः।**

**तथाऽसांवत्सरो राजा भ्रमत्यन्ध इवाध्वनि ।।**

**इकाई समाप्त**

**लघूत्तरात्मक प्रश्न-**

प्रश्न-1. कालविधानशास्त्र के रूप में कौनसा शास्त्र प्रसिद्ध हैं? ज्योतिषशास्त्र।

प्रश्न-2. यागादि क्रियाकलापों के निर्वहण के लिए उचित काल निर्दिशत किस शास्त्र के द्वारा होता है? ज्योतिषशास्त्र।

प्रश्न-3. वेदाङ्गज्योतिष के आचार्य हैं? आचार्य लगधमुनि।

प्रश्न-4. सृष्टि से लेकर प्रलय पर्यन्त समय का आंकलन किस स्कन्ध से किया जाता है? सिद्धान्त।

प्रश्न-5. ज्योतिषशास्त्र के कितने प्रवर्तक हैं?(18) अष्टादश।

प्रश्न-6. काल कितने प्रकार का होता है दो

प्रश्न-7. गणना करनेवाला काल कितने प्रकार का होता है दो प्रकार का 1.स्थूल (मूर्त्त),2. सूक्ष्म ( अमूर्त्त)

**रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-**

प्रश्न-1. दैवज्ञ प्रश्न ............को संशोध्य उस कार्य के लिए काल का निर्देश देता है। लग्नादि।

प्रश्न-2. यज्ञ और सोलह संस्कारों की सफलता के लिए प्रारब्ध शास्त्र ..................ही है। ज्योतिषशास्त्र।

प्रश्न-3. .............सम्पूर्ण विश्व में ज्ञानपीठ के रूप में प्रसिद्ध है। भारत।

प्रश्न-4. प्रथम काल ..............करनेवाला द्वितीयकाल......................। गणना करनेवाला, प्राणियों का संहार

**निबन्धात्मक प्रश्न-**

प्रश्न-1. वैदिकवाङ्मय में ज्योतिषशास्त्र के महत्त्व का सामान्य परिचय दीजिए?

# इकाईः 3 नवविधकालमान

**प्रस्तावना** – इन काल मानों से ज्योतिषीय विषय ज्ञान एवं लोक व्यवहार के लिए समय का ज्ञान किया जाता है, परन्तु लोक व्यवहार के लिए सौर, सावन, चान्द्र, तथा नाक्षत्र मानों का उपयोग होता होता है। यथा- गोल, अयन,ऋतु , वर्ष, संक्रान्ति और युग का ज्ञान सौरमान से, दिन- वर्षों के स्वामी एवं ग्रहों की मध्यगति का ज्ञान सावनमास से, तिथि, मास, करण, पर्वोत्सव, यात्रा, विवाहादि का ज्ञान चान्द्रमान से एवं घंटा एवं मिनट सम्बन्धित ज्ञान चान्द्रमान से होता है।

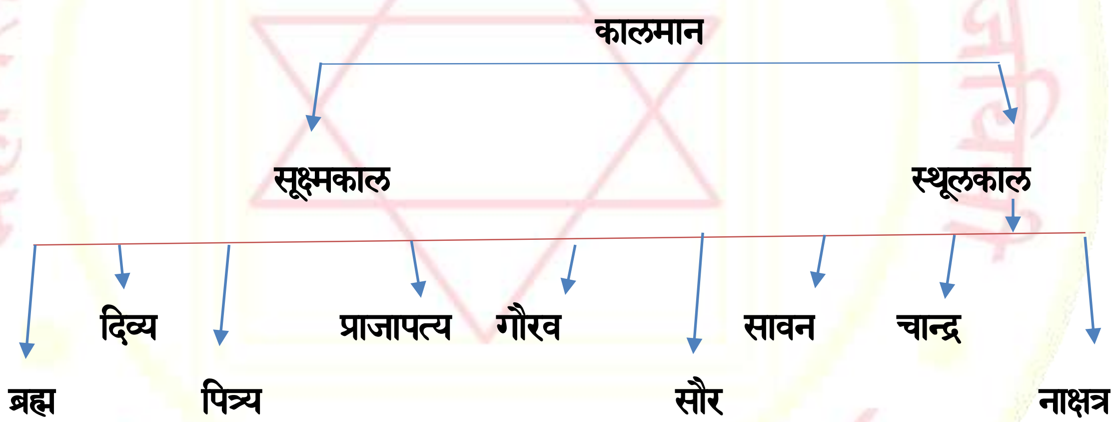


**दिन- रात्रि-** सूर्य जब उदय क्षितिज से ऊपर होता है तो दिन होता है एवं पश्चिम क्षितिज से नीचे जाता है तो रात्रि।

**राशियों और नक्षत्रों की उत्पत्ति-**

**पुनर्द्वादशधात्मानं विभजेद् राशिसंज्ञकम् ।**

**नक्षत्ररूपिणं भूयः सप्तविंशात्मकं वशी ॥ ॥। २५ ॥।**

इस प्रकार ब्रह्मा जिनके वशीभूत समस्त सृष्टि है उन्होंने अपने आप ब्रह्माण्ड को द्वादश भागों में विभक्त कर दिया जो राशि संज्ञक हुए। तथा पुन: उस ब्रह्माण्ड को सत्ताईस भागों में विभक्त किया तो वे नक्षत्र संज्ञक हुए।

किस दिन ब्रह्मा शयन से उठकर सृष्टि करेंगे एवं किस दिन ब्रह्मा शयन करेंगे अर्थात् प्रलय होगी। इसलिए सृष्टि के ज्ञान, फलादेश के ज्ञान तथा आयनादि के ज्ञान के लिए ब्रह्ममान का ज्ञान अत्यावश्यक है।इसी से हम सृष्टि के आरम्भ से लेकर वर्तमान काल तक का विवेचन सौरवर्ष से दिव्यवर्ष- युग- महायुग- मन्वन्तर-कल्पादि द्वारा ब्रह्ममान का निर्धारण कर सकते हैं।

**स्थूलकाल** – ये नौ भागों में विभाजित है। ब्राह्य-दिव्य- पित्र्य-प्राजापत्य-गौरव (गुरु सम्बन्धी बार्हस्पत्य ), सौर- सावन-चान्द्र और नाक्षत्र ये नव प्रकार के स्थूकाल मान होते हैं।

- **नवविधकालमान-**

**ब्राह्मं दिव्यं तथा पित्र्यं प्राजापत्यं च गौरवम्।**

**सौरञ्च सावनं चान्द्रमार्क्षं मानानि वै नव।।** (सू.सि.मा.1)

सौर- सावन-चान्द्र और नाक्षत्र इन्ही चार मानों के द्वारा मानव अपने दैनन्दिन जीवन में नित्य-नैमत्तिक कार्यों में सफलता प्राप्त करते हैं। गौरवमान (गुरु सम्बन्धी बार्हस्पत्य ) से 60 संवत्सरों की गणना करते हुए वर्ष का नामाकरण किया जाता है। ब्राह्य-दिव्य- पित्र्य-प्राजापत्यादि चार कालमानों का प्रयोग व्यवहार में न होकर युग- मन्वन्तर- कल्पादि की गणना करते हुए ज्योतिषशास्त्र की स्थूल विषयों के निर्धारण में किया जाता है। जैसा कि सूर्यसिद्धान्तकार का वचन है कि-

**चतुर्भिर्व्यवहारोऽत्र सौरचान्द्रर्क्षसावनैः।**

**बार्हस्पत्येन षष्ठ्यब्दं ज्ञेयं नान्यैस्तु नित्यशः।।**

3.1. **ब्रह्मकाल मान – ब्रह्मण इदं ब्राह्मम्।** अर्थात् ब्रह्मा के काल को ब्राह्म मान कहा जाता है। एक कल्प ब्रह्मा का एक दिन एवं एक कल्प रात्रि होती है।

**महायुग**- सौरमान से 4,23,000 कलियुग का मान है। इस मान को क्रमशः 2,3,4 गुणा करें तो कृमशः त्रेता-द्वापर-सतयुगों का मान होता है। सभी का योग करने पर 43,20,000 सौरवर्ष होते हैं।

360 दिनों का= एक सौरवर्ष( सूर्य का एक भगण) = एक दिव्य दिन

360 दिव्य दिनों का = एक दिव्य वर्ष

1200 वर्ष = कलियुग का मान

1200x360= 4,32,000 सौरवर्ष

4,32000 x 4= 17,28000 सौरवर्षो के कृतयुग का प्रथम चरण

4,32000 x 3= 12,93000 त्रेतायुग

4,32000 x 2= 8,64000 द्वापरयुग

4,32000 x 4= 4,32,000 कलियुग

सन्ध्या व सन्ध्यांश के मान-

कृतादौ 1728000/12=14,4000

कृत- अवसान 1728000/12=14,4000

त्रेतादौ =10,8000

त्रेता= अवसान 10,8000

द्वापरादौ= 72,000

द्वापरावसान=72,000

कल्पादौ= 36,000

कल्पान्त=36,000

इस प्रकार सन्ध्या- सन्ध्यांश सहित 43,20,000 सौरवर्ष का 1 युग।

1000 युगों का ब्रह्मा का एक दिन । चारों युगों के समूह को महायुग कहते है।

71 महायुगों का 1 मनु , 71 युगों की संख्या के तुल्य 1 मन्वन्तर

1 कल्प – 14 मनु

1 मनु सन्धि = कृतयुग

4,32,000x4= कृतयुग = मनुसंधि।

4,32,000x4 x 15= 15 मनुसंधि मान = 6 महायुग।

काल की दीर्घ इकाई कल्प, मनु, युग, वर्ष, ऋतु, की गणना सौरमान से, तिथि और मास की गणना चान्द्रमान से, दिन की गणना सावन मान से तथा काल की लघु इकाई घटी पल विपल आदि की गणना नाक्षत्रमान से ही की जाती है।

1 कल्प – 14 मनु+15 संधिमान

=14 x71 महायुग+6 महायुग

=1000 महायुग( चतुर्युग) इस प्रकार एक हजार महायुग का भूतसंहारकारक (सृष्टि का संहारकारक) एक कल्प = ब्रह्मा का एक दिन, एक कल्प तुल्य रात्रि एवं 2 कल्प ब्रह्मा का अहोरात्र होता है। जैसा कि सूर्यसिद्धान्त में कहा गया है-

**ससन्धयस्ते मनवः कल्पे ज्ञेयाश्चतुर्दश।**

**कृतप्रमाणः कल्पादौ सन्धिः पञ्चदशः स्मृतः।।**

**इत्थं युगसहस्रेण भूतसंहारकारकः।**

**सौर गणना से मन्वन्तर गणना-**

1 सौर वर्ष के तुल्य 1 दिव्य अहोरात्र।

360 सौर वर्षों के तुल्य 1 दिव्यवर्ष।

12, 000 दिव्यवर्ष 12000×360=1 महायुग।

71 महायुग = 1 मन्वन्तर।

1 मनु 71×12000 = 852000 दिव्य वर्ष।

1 दिव्य वर्ष 852000×360 = 306720000 सौर वर्ष= 1 मन्वन्तर

इस प्रकार 14 मन्वन्तरों का काल सन्धि सहित सम्पन्न होता है तो एक कल्प की अवधि पूर्ण होती है। इस प्रकार ब्रह्मा के कल्पारम्भ से अपनी- अपनी सन्धियों के साथ स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तमज, तामस, रैवत तथा चाक्षुष नामक 6 मन्वन्तर एवं 7 इनकी सन्धियाँ भी समाप्त हो चुकी है और वर्तमान में सातवां वैवस्वत मन्वन्तर चल रहा है। इसी का प्रयोग यज्ञादि कर्म के आरम्भ से पहले संकल्प में किया जाता है। जैसा कि सूर्यांश पुरुष का वचन है-

**कल्पादस्माच्च मनवः षड् व्यतीताः ससन्धयः।**

**वैवस्वतस्य च मनोर्युगानां त्रिघनो गतः।**

अर्थात् 60 कल्प में 30 अहोरात्र एवं एक मास में 720 कल्प तथा बारह ब्राह्म मास में एक ब्राह्म वर्ष होता है। इस प्रकार ब्रह्मा की आयु 72000 कल्प की होती है, इसमें से ब्रह्मा की आयु के 50 वर्ष समाप्त होकर 51 वें वर्ष का प्रथम दिन (कल्प) चल रहा है। कल्प दिन के भी 6 मन्वन्तर तथा 7वें मन्वन्तर के भी 27 महायुग व्यतीत हो चुके हैं एवं वर्तमान 28वें महायुग के भी सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और शक 1947 तक कलियुग के 5126 सौरवर्ष व्यतीत हो चुके हैं। यहाँ वर्तमान शक 1947 और संवत् 2081 चल रहा है। इस सम्पूर्ण काल के एकत्र पिण्ड बनाने पर कल्पारम्भ से कृतयुगान्त सौरवर्षों का योग 1,970,789,126 सौरवर्ष प्राप्त हुए।

**वर्तमान कल्प के आरम्भ से 28वें महायुग के सत्ययुग के अन्त पर्यन्त काल--**

कल्प की आदि सन्धि = 1728000 सौरवर्ष (कृतयुग तुल्य)

6 मनु = 6× 71 = 426 महायुग (1 मनु = 71 महायुग)

1 महायुग = 4320000 सौरवर्ष 426 महायुग = 426 × 4320000 = 1840320000

6 मनु की सन्धियाँ = 6

मनु की सन्धि 1 = 1 कृतयुग

6 सन्धियों का मान = 6 × 1728000 (कृतयुग का मान) = 10368000 सौरवर्ष

सातवें मनु के 27 महायुगों का मान = 27 × 4320000 116640000 सौरवर्ष

28वें महायुग के सतयुग का मान 1728000 सौरवर्ष

कल्पारम्भ से कृतयुगान्त सौरवर्ष 1728000+840320000+10368000+116640000+1728000 1970784000 सौरवर्ष ।

वर्तमान शक 1947 में कल्प वर्षों की कुल संख्या को ज्ञात करने के लिए प्राप्त सौरवर्षों में त्रेता के 1296000 सौरवर्ष, द्वापर के 864000 सौरवर्ष तथा कलियुग के 3179 वर्ष व्यतीत होने के बाद शक संवत् का आरम्भ हुआ था। वर्तमान शक 1947 और संवत् 2081 चल रहा है। इस सम्पूर्ण काल के एकत्र पिण्ड बनाने पर कल्पारम्भ से कृतयुगान्त सौरवर्षों का योग 1970784000 सौरवर्ष+3179+1947=970,789,126 सौरवर्ष प्राप्त हुए।

**3.2. दिव्यमान-** देवताओं का मान दिव्य मान होता है। एक मानव वर्ष का (1) दिव्यदिन होता है। 360 दिव्यदिन एक दिव्य वर्ष होता है।

**देवानामिदं दिव्यम्** अर्थात् देवताओं से सम्बन्धित कालमान दिव्यमान होता है। यह सौरमान पर आधारित है अर्थात् सूर्य के 12 राशियों के भोगकाल में देवताओं और असुरों के विपरीत क्रम से अहोरात्र होते हैं। देवताओं का छः-छः मास का एक दिन एवं 6-6 मास की एक रात्रि होती हैं। सूर्य के मेषादि छः राशियों में गोचर को देवों का दिन एवं दानवों की रात्रि तथा तुलादि छः राशियों में रहने पर दैत्यों का दिन एवं देवों की रात्रि होती है। इस प्रकार 360 अहोरात्र का देवदानवों का एक वर्ष होता है **बारह(12) सौर मासों का एक सौर वर्ष होता है और इसी सौर वर्ष को एक (1) दिव्य दिन कहते हैं।** इस प्रमाण को वैज्ञानिक भी अपनी शोध द्वारा सिद्ध कर चुके है कि उत्तरी ध्रुव - दक्षिणी ध्रुव पर क्रमशः 6 मास के दिन तथा 6 मास की रात्रि होती है।

**ऐन्दवस्तिथिभिस्तद्वत् संक्रान्त्या और उच्यते।**

**मासैर्द्वादशभिर्वर्षं दिव्यं तदह उच्यते।**

सूर्य का एक राशि भोग्यकाल = 1 सौर मास।

12 सौरमास = 360 सौर दिन।

360 सौर दिन = 1 सौर वर्ष।

1 सौर वर्ष = 1 दिव्यदिन।

360 दिव्यदिन= 1 दिव्य वर्ष।

मेषादि छ: राशियों में स्थित रहने पर सूर्य का दर्शन उत्तरीध्रुव ( उत्तरगोल) में और तुलादि छ: राशियों में स्थित रहने पर सूर्य का दर्शन दक्षिणी ध्रुव के भाग में होता है। मेषादि से कन्यान्त पर्यन्त छ: राशियों में भ्रमण करता हुआ सूर्य विषवुत (नाडी) वृत्त से उत्तर में ही रहता है अत: लगभग 6 मास पर्यन्त सूर्य का दर्शन उत्तर गोल में होता है। इसी प्रकार तुलादि से मीनान्त पर्यन्त 6 शशियों में सूर्य नाडी वृत्त से दक्षिण में रहता है अत: 6 मास पर्यन्त सूर्य का दर्शन दक्षिण गोल में ही होता है। इसी प्रकार देवों व देत्यों की दिन-रात्रि विपरीत क्रम से 6 महीने का दिन एवं 6 महीने की रात्रि होती है।

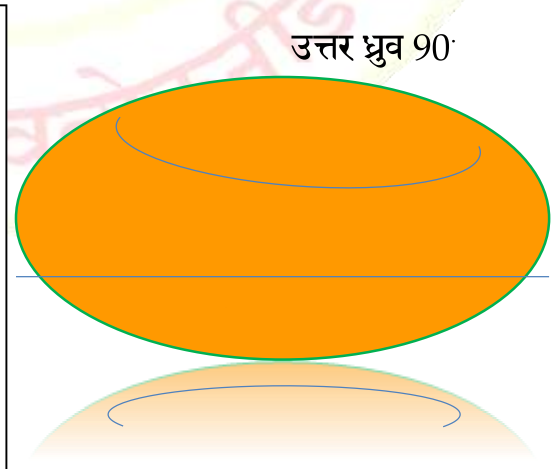

दक्षिण ध्रुव 90·

यथा- सुरासुराणामन्योन्यमहोरात्रं विपर्ययात्।

तत्षष्टिः षड्गुणा दिव्यं वर्षमासुरमेव च।। (सू.सि.म.14)

**3.3. पितृमान-** पितरों से सम्बन्धित कालमान पितृ मान कहलाता है। पितृ कालमान का सम्बन्ध चान्द्रमास से है और चन्द्रमा के कारण ही पितृमान का उद्भव माना जाता है अर्थात् वही (1 मास ) पितरों का एक अहोरात्र होता है। मासान्त(दर्शान्त) में अमावस्या को मध्यरात्रि और पक्षान्त पूर्णिमा को पितरों का दिनार्ध होता है) तथा पूर्णिमा के पश्चात् कृष्णपक्ष की सार्ध सप्त तिथि से दिन एवं कृष्णपक्ष की अमावस्या के बाद शुक्लपक्ष की सार्ध सप्त तिथि से रात्रि प्रारम्भ होती है। अर्थात् अमावस्यान्त में पित्रों का मध्याह्न एवं पूर्णिमान्त में मध्यरात्रि होती है। शुक्लपक्ष की प्रतिपदादि तिथियाँ भी चान्द्रदिन से ही व्यवहार में प्रयोग की जाती है और 30 चान्द्र तिथियों का एक चान्द्रमास होता है। यथा सूर्यसिद्धान्त वचन-

**त्रिंशता तिथिभिर्मासश्चान्द्रः पित्र्महः स्मृतम्।**

**निशा च मासपक्षान्तौ तयोर्मध्ये विभागतः।।सू.सि.14-14**

**त्रिंशता त्रिंशन्मितैस्तिथिभिश्चान्द्रो मास:।**

चन्द्रमा के ऊर्ध्व भाग पर 15 दिन, मानव दिनों का पितरों का एक दिन तथा 15 दिन की एक रात्रि होती है और इससे ही पित्र्य अहोरात्र होता है, जैसा कि सूर्यांश पुरुष ने कहा है - **पितरः शशिगा पक्षं स्वदिनं च नरा भूवि**। अमावस्या तिथि को पित्र्य अहोरात्र का मध्याह्न होता है और पूर्णिमा तिथि को पितरों की मध्यरात्रि होती है। कृष्ण पक्ष की सार्ध सप्तमी से पित्र्य अहोरात्र का दिनारम्भ तथा शुक्ल पक्ष की सार्ध सप्तमी तिथि से पितरों की रात्रि आरम्भ होती है। प्रतिपदा से अमावस्या पर्यन्त चान्द्रमास होता है। जैसा कि देवगुरुबृहस्पति ने कहा है कि **कुहोर्ययावसान स्यात् चान्द्रस्याद्यन्तकस्तथा। (मु.वि.7)** अतः पित्र्यमान का आशय चन्द्रमा पर होने वाली दिन- रात्रि व्यवस्था का प्रमाण है। प्राचीन आचार्यों के इसी प्रमाण को आधार मानकर वैज्ञानिक चन्द्रमा पर यात्रा व चन्द्रयान भेजते हैं।

**चान्द्र कालमान का प्रयोग तिथि, करण, विवाह, मुण्डन, व्रत-उपवास, यात्रा विषयक विचार, जातकर्म सदृश अन्य सभी कार्यों में होता है।**

**3.4 प्राजापत्य काल मान-** मन्वन्तर व्यवस्था अर्थात् 71 महायुगों का (1 मनु ) प्राजापत्य मान होता है क्योंकि एक कल्प के तुल्य ब्रह्मा का एक दिन और 1 कल्प की ही एक रात्रि होती है। मनु (मन्वन्तर व्यवस्था ) का मान प्राजापत्य मान होता है। मन्वन्तर व्यवस्था के अन्तर्गत एक मनु के तुल्य काल प्राजापत्य मान कहा जाता है अर्थात् एक मनु के आरम्भ से द्वितीय मनु के प्रादुर्भाव पर्यन्त कालमान। इस प्राजापत्य मान में अहोरात्र का भेद नहीं होता है। यथा सूर्यसिद्धान्त वचन-

**मन्वन्तरव्यवस्था च प्राजापत्यमुदाहृतम्।**

**न तत्र द्युनिशोच्छेदो ब्राह्मं कल्पं प्रकीर्त्तितम्।।21।।**

**3.5.गौरव काल मान-** बृहस्पति के मध्यम गति के अनुसार गौरव या बार्हस्पत्य मान होता है। बृहस्पति से सम्बन्धित मान को वार्हस्पत्य कहते हैं। अर्थात् बृहस्पति को मध्यम गति से एक राशि का भोग करने में लगने वाला समय। बृहस्पति को मध्यम गति से एक राशि (30 अंश )का भोग करने में एक वर्ष का समय लगता है और यही 1 संवत्सर बृहस्पति का एक वर्ष होता है। प्रभवादि संवत्सरों की संख्या 60 है।

प्रभवादि 60 संवत्सरों की एक आवृति पूर्ण होने पर पुनः इन्हीं संवत्सरों की आवृति प्रारम्भ होती है। वेदों में इन संवत्सरों का उल्लेख प्राप्त होता है तथा शकादि संवत्सर से इनकी प्रवृति सिद्ध होती है। परन्तु सृष्टिकाल में विजयादि संवत्सरों की प्रवृति सिद्ध होने के कारण सूर्यासिद्धान्तादि ग्रन्थों में विजयादि संवत्सरों की आनयन आरंभ होता है।

**गुरु वर्षों की मास संज्ञा**

**वैशाखादिषु कृष्णे च योगात् योगात् पञ्चदशे तिथौ।**

**कार्तिकादीनि वर्षाणि गुरोरस्तोदयात् तथा।।( सू.सि.14.27)**

वैशाखादि मासों में कृष्णपक्ष की 15वीं (अमावस्या) तिथि में कृतिकादि नक्षत्रों के होने पर ही कार्तिकादि बार्हस्पत्य कार्तिकादिमास होते हैं। इस विधि से जिस मास में गुरु उदय व अस्त हो, उस मास की अमावस्या तिथि को जो नक्षत्र होगा उसी नक्षत्र के नाम से बृहस्पति वर्ष प्रारम्भ होता है। यथा- कृतिकादि दो-दो नक्षत्रों में बृहस्पति के संचार करने से कार्त्तिकादि 12 मास होते हैं। उसी तरह बारह वर्ष भी होते हैं, इनमें पाँचवां, ग्यारहवां तता बारहवां वर्ष तीन-तीन नक्षत्र के होते हैं। 5 वर्षों का एक युग होता है तथा युग 12 होते है।

बृहस्पति के ये नक्षत्र संज्ञक वर्ष मध्यम मान से होने वाले 60 संवत्सरों से सम्बन्धित गौरव वर्षों से भिन्न होते हैं।

**3.6. सौरमान- सङ्क्रान्त्या सौरोच्यते। (सू.सि.2.13)**सूर्य की स्पष्ट गति के अनुसार अहोरात्रादि सौरमान होते हैं। सूर्य के द्वारा राशि (30°) के एक अंश को भोगने में लगने वाले समय को सौर दिन कहते है। सूर्य के एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश समय को संक्रान्ति कहते हैं। एक संक्रान्ति से दूसरी संक्रान्ति पर्यन्त सूर्य जितने समय तक एक राशि पर रहता है उस भोगकाल को(एक सूर्य संक्रमण से द्वितीय सूर्य संक्रमण पर्यन्त) सौर मास कहते हैं। यथा- **राशौ राशौ रवेर्योगात्सौरमासः प्रकीर्तितः।(मु.वि.7)** अर्थात् सूर्य का एक राशि का भोगकाल। इन्हीं 12 सौरमासों का एक सौर वर्ष होता है अर्थात् सूर्य के 12 राशियों का भोगकाल। सूर्य के एक राशि चक्र के 360 अंशों के एक चक्र भ्रमण को एक सौर वर्ष कहते हैं। यथा- **रवेश्चक्रभोगोऽवर्षं प्रदिष्टम्।**( सि.शि.का.19) अतः स्पष्ट है कि सूर्य को एक चक्र का भ्रमण करने में 360 दिन लगते हैं और इसी सौरवर्ष को देवताओं का दिव्यदिन कहा जाता है।

**ध्यातव्य-** सङ्क्रान्तियाँ दो प्रकार की होती हैं- सायन अयनांश युक्त। और दूसरी निरयण अर्थात् अयन रहित। अयनांशयुक्त स्पष्टसूर्य की सङ्क्रान्ति को सायन सूर्यसङ्क्रान्ति या फिर दृश्य सङ्क्रान्ति कहते हैं। लेकिन ज्योतिष एवं धर्मशास्त्र निरयण सूर्यसङ्क्रान्ति को ही महत्त्व देते हैं। इसका निराकरण मुहूर्तचिन्तामणि की पीयूषधारा टीका में पुलस्त्य के वचन के रूप में उल्लेख प्राप्त होता है कि स्नानदानजपश्राद्धव्रतहोमादि कार्यों में सायन सङ्क्रान्ति का व्यवहार अक्षय पुण्य लाभाय होता है। परन्तु इनके अतिरिक्त चल या सायन सङ्क्रान्ति निर्देशित परिगणित धर्म-कार्यों के अतिरिक्त उपनयन, विवाहादि शुभकर्म निरयण संक्रान्ति के अनुसार करने चाहिए। यथा-

स्नानदानजप श्राद्धव्रतहोमादिकर्मसु ।
सुकृतं चलसङ्क्रान्तावक्षयं पुरुषोऽश्नुते ।।

इसी प्रकार मुहूर्त गणपति में भी उल्लेख मिलता है-

सायनस्य रवेर्वापि यदा सङ्क्रमणं भवेत् ।
यदा स्यादधिकं पुण्यं रहस्यं विदुषा हि तत् ।।

दिन-रात्रि का मान, षडशीतिमुख। संक्रान्तियों का मान, अयन (दक्षिणायन-उत्तरायण) अर्थात् सूर्य मकर संक्रान्ति से मिथुन राशि पर्यन्त उत्तरायण तथा कर्क संक्रान्ति से धनु पर्यन्त दक्षिणायन होते हैं।

**भानोर्मकरसङ्क्रान्तेः षण्मासा उत्तरायणम्।**
**कर्कादिस्तु तथैव स्यात् षण्मासा दक्षिणायनम्।।**(सू.सि.14.9)

लेकिन आपके मन में शंका होगी कि संक्रान्ति क्या है और कैसे होती है, तो अब इसके बारे विस्तार सें विचार करेंगे। मेषादि 12 राशियों में क्रम से सञ्चार करता हुआ सूर्य पूर्व राशि से उत्तर राशि में प्रवेश(सङ्क्रमण) को सङ्क्रान्ति कहते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह के राशि सञ्चार को भी सङ्क्रान्ति कह सकते है परन्तु सूर्य के अतिरिक्त अन्य ग्रहों के बिम्ब सूक्ष्म होने के कारण सङ्क्रान्ति काल सूक्ष्म होता है। इसीलिए सूर्य के राशि प्रवेश को ही सङ्क्रान्ति कहते हैं। **सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च** वेदवचनानुसार ज्योतिषशास्त्र में सूर्य आत्मा का कारक माना जाता है।

**तेजसां गोलकः सूर्यः ग्रहर्भाण्यम्बुगोलकाः।**

**प्रभावन्तो हि दृश्यन्ते सूर्यरश्मिप्रदीपिताः ।।**

सूर्यसिद्धान्त के अनुसार सूर्यकिरणों से अन्य ग्रहों के बिम्ब प्रकाशित होते हैं, उनका स्वयं प्रकाश नहीं होता है।। अतः सूर्य राशि प्रवेश के सक्रमण की प्रधानता है।

सूर्य जितने समय में द्वादश राशियों में सञ्चार को पूर्ण करता है वह काल एक सौर वर्ष कहलाता है। इसका 12वां भाग एक सौरमास। सूर्य सञ्चार के कारण ही दिन-रात्रि भेद एवं ऋतुभेद होते हैं।

सूर्य के मेष-तुला राशि के सक्रमण की सङ्क्रान्ति को विषुवत्सङ्क्रान्ति कहते है, क्योंकि मेष-तुला में सूर्य विषुवद्वृत्त में भ्रमण करता और विषुवद्वृत्त ही उसका अहोरात्र वृत्त होता है। इसालिए उस दिन दिनमान समान होता है। अतएव विषुवत् दिन में सूर्य पूर्वदिशा में उदय होता है और अन्य दिनों में विषुव (सौम्यगोल-याम्यगोल) कुछ भिन्न रूप से उदय होता है। अतः ज्योतिषशास्त्र में विषुवसङ्क्रान्ति की प्राधान्यता होती है। विषुवद् दिन के मध्याह्न में द्वादशाङ्गुल शङ्को की छाया को 'पलभा' कहते हैं, इससे स्वदेश का अक्षांश ज्ञात होता है। मेष से कन्या राशि पर्यन्त सञ्चार करता हुए सूर्य उत्तरगोलस्थ तथा तुलादि से षड्राशि में दक्षिणगोल होता है। उत्तरगोल में स्थित सूर्य में दिनमान एवं दक्षिणगोल में रात्रिमान की अधिकता होती है।

सूर्य की कर्क-मकरराशि सङ्क्रान्ति को अयन सङ्क्रान्ति कहते है। कर्कादि से दक्षिणायनारम्भ और मकरादि से उत्तरायणारम्भ होता है। उत्तरायण में देवताओं का दिन एवं दक्षिणायन में उनकी रात्रि होती है।

वृषभ - सिंह वृश्चिक कुम्भराशि इन चार स्थिरराशियों की सङ्क्रान्ति विष्णुपदी सङ्क्रान्ति, मिथुन - कन्या – धनुमीन चार द्विस्वभावराशियों की सङ्क्रान्ति षडशीत्यानन सङ्क्रान्ति होती है।

यथा सूर्यसिद्धान्तकार-

**सौर्येण द्युनिशोर्मानं षडशीतिमुखानि च।**

**अयनं विषुवच्चैव सङ्क्रान्तेः पुण्यकालता।।** ( सू.सि.मा.3)

अहोरात्र मान, दो विषुव संक्रान्तियाँ (सूर्य का मेष-तुला राशि- सौम्यगोल- याम्यगोल) में संक्रमण तथा दो अयन( दक्षिणायन- उत्तरायण) (सूर्य का कर्क- मकर संक्रान्ति) राशि में संक्रमण। इस प्रकार 4 संक्रान्ति होती हैं। अर्थात् मेष (विषुव) संक्रान्ति से कर्क(अयन) संक्रान्ति के मध्य में वृष एवं मिथुन दो संक्रान्तियाँ होती हैं। इसी तरह कर्क (अयन) सङ्क्रान्ति तथा तुला (विषुव) सङ्क्रान्ति के मध्य में सिंह एवं कन्या सङ्क्रान्तियाँ भी होती हैं। सूर्य का (मिथुन ($18^0$), कन्या($14^0$), धनु($26^0$), मीन$22^0$) राशि में संक्रमण को **षडशीतिमुख संक्रान्ति कहते हैं।** सूर्य के (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशि में संक्रमण) को **विष्णुपदी संक्रान्ति** कहते हैं। यथा सूर्यांश पुरुष वचन-

**भचक्रनाभौ विषुवदद्वितयं समसूत्रगम्।**

**अयनद्वितयं चैव चतस्रः प्रथितास्तु ताः।।**

**तदन्तरेषु सङ्क्रान्तिद्वितयं द्वितयं पुनः।**

**नैरन्तर्यात् तु सङ्क्रान्तेर्ज्ञेयं विष्णुपदीद्वयम्।।**( सू.सि.मा.7-8)

**तुलादिषडशीत्यहनां षडशीतिमुखं क्रमात् ।**

**तच्चतष्टयमेव स्यात् द्विस्वभावेषु राशिषु ।।**

**षड्विंशे धनुषो भागे द्वाविंशेऽनिमिषस्य तु।**

**मिथुनाष्टादशे भागे कन्यायास्तु चतुर्दशे ।।**

**ततः शेषाणि कन्यायाः यान्यहानि तु षोडश।**

**क्रतुभिस्तानि तुल्यानि पितृणां दत्तमक्षयम् ।।**(सूर्यसिद्धान्त)

इन चारों संक्रान्ति में 344 दिन होते हैं और 16 दिन अवशिष्ट बचते हैं उन दिनों में जब कन्या राशि में सूर्य के संचार करने करने पर पितृपक्ष प्रारंभ होता है सूर्य की 12 राशि सङ्क्रान्ति के कारण ही 6 ऋतु होती हैं। यथा—सूर्य के मकर-कुम्भ में सञ्चारकाल शिशिर, मीन-मेष में सञ्चार वसन्तः, वृष-मिथुन में ग्रीष्मः,

कर्क-सिंह में वर्षा, कन्या-तुला में शरत्, वृश्चिक-धनु में सञ्चारकाल हेमन्त ऋतु इस प्रकार 6 ऋतु होती हैं। संक्रान्तियों का पुण्यकाल सौरमान द्वारा ही निश्चित किया जाता है। सूर्य के राशि परिवर्तन के कारण ही **ऋतुओं में परिवर्तन** होता है यथा वेदों में भी उल्लेख है-

**आदित्यस्त्वेव सर्वे ऋतवः। यदैवोदेत्यथ वसन्तो यदा संगवोऽथ ग्रीष्मो**

**यदा मध्यन्दिनोऽथ वर्षा यदापराह्णोऽथ शरद्यदैवास्तमेत्यथ हेमन्तः** ।।(.2.2.3.9)

**ऋतुज्ञान चक्र-**

मेषादि दो-दो राशियों का भोगकाल ऋतु कहलाता है। इस प्रकार कालगणना में एक वर्ष को छः ऋतुओं में विभाजित किया गया है। जैसा कि सूर्य सिद्धान्त में कहा गया है - **"द्विराशिनाथा ऋतवस्ततोऽपि शिशिरादयः**14.10" शिशिरादि ऋतुओं की प्रवत्ति मकर राशि से प्रारंभ होती है। सौर गणना के अनुसार दो सक्रान्तियों की और दो चान्द्रमास की भी एक ऋतु होती है।

यथा- **सूर्य एवं चान्द्रमास के अनुसार वसन्तादि ऋतु चक्र-**

| ऋतुएँ | वसन्त | ग्रीष्म | वर्षा | शरद | हेमंत | शिशिर |
|---|---|---|---|---|---|---|
| सौरमास | मीन,मेष | वृषभ, मिथुन | कर्क, सिंह | कन्या, तुला | वृश्चिक, धनु | मकर, कुंभ |
| चान्द्रमास | चैत्र | ज्येष्ठ | श्रावण | आश्विन | मार्गशीर्ष | माघ |
| मास | वैशाख | आषाढ़ | भाद्रपद | कातिक | पौष | फाल्गुन |

**3.7. सावनदिन मान-** एक ही क्षितिज पर दो सूर्योदयों के मध्य का काल सावन दिन होता है। एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक का काल एक सावन दिन कहलाता है। अर्थात् भूमि पर व्यवहार में आने वाला दिन, इसे **कुदिन व भूदिन** भी कहते हैं। 30 सावन दिनों के समूह को एक सावन मास कहते है **त्रिंशद्भानूदयादेव मासः सावन उच्यते।** और 12 सावन मासों का एक सावन वर्ष होता है। यथा सूर्यसिद्धान्तकार-

**उदयादुदयं भानोः सावनं तत्प्रकीर्तितम्।**

**सावनानि स्युरेतानि यज्ञकालविधिस्तु तैः** ।।( सू.सि.14.18)

**सावनमास का प्रयोजन-**

मध्यम सावन कालमान के आधार पर ही यज्ञादि, जन्मादि सूतकों का निर्धारण, दिन, मास एवं वर्ष के स्वामियों का निर्णय, मध्यम ग्रहगति का निर्णय, चान्द्रायण आदि व्रतों का निर्णय, कल्प या युग से अहर्गण साधन एवं यज्ञकालादि के निर्णय में किया जाता है।, यथा सूर्यसिद्धान्तकार-

**सूतकादिपरिच्छेदो दिनमासाब्दपास्तथा।**

**मध्यमा ग्रहभुक्तिस्तु सावनेनैन गृह्यते।।( सू.सि.14.19)**

**3.18. चान्द्रमान** - तिथि का भोगकाल चान्द्र दिन होता है। अर्थात् सूर्य एवं चन्द्रमा की युति के बाद सूर्य से चन्द्र 12 अंश की दूरी तय करता है उसे चान्द्रदिन (एक तिथि) कहते हैं।

**चान्द्रमान- अमान्तादमान्तं तु चान्द्रमासः।** अमावास्या से द्वितीय अमावास्या का काल चान्द्रमास (30 तिथि का काल) कहलाता है। चन्द्रमा की गति से सम्बन्धित मान चान्द्रमान होता है। अमावस्या को सूर्य और चन्द्रमा एक साथ रहते हैं। सूर्य और चन्द्रमा की युति के बाद सूर्य से चन्द्रमा पूर्व दिशा की ओर प्रतिदिन 12 अंश की दूरी तय करता है, उसे चान्द्रदिन (एक तिथि) कहते हैं। इसी प्रकार जब सूर्य तथा चन्द्रमा के मध्य 12 अंश का अन्तर होता है तो प्रतिपदा तिथि होती है। इसी प्रकार द्वितीया, तृतीयादि तीस तिथियों से एक चान्द्रमास बनता है। चन्द्रमा की कलाओं के आधार पर चान्द्रमास को दो पक्षों शुक्ल पक्ष तथा कृष्ण पक्ष में विभक्त किया गया है। इन शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष दोनों में ही 15-15 तिथियाँ होती हैं। शुक्ल पक्ष की पन्द्रहवीं तिथि पूर्णिमा तथा कृष्ण पक्ष की पन्द्रहवीं तिथि अमावस्या होती है। अमावस्या तिथि को आकाश में चन्द्रमा दिखाई नहीं देता है। लेकिन जब आकाश मण्डल में चन्द्रमा क्रमशः 12 अंश बढ़ता हुआ प्रतीत होता है तो वह पक्ष शुक्ल पक्ष तो वहीं पूर्णिमा के बाद चन्द्रमा क्रमशः 12 अंश घटता हुआ प्रतीत होता है तो उसे कृष्ण पक्ष कहते हैं। इन्हीं 12 चान्द्र मासों के मिलने से एक चान्द्र वर्ष का निर्माण होता है और यह चान्द्रवर्ष 354 दिन का होता हैं।

यथा सूर्यसिद्धान्तकार-

**अर्काद् विनिस्सृत: प्राचीं यद्यात्यहरह: शशी ।**

**तच्चान्द्रमानमंशैस्तु ज्ञेया द्वादशभिस्तिथि: ॥( सू.सि.मा. 12)**

**सूर्य और चन्द्रमा में अन्तर के अनुसार तिथियाँ-**

चन्द्रमा की एक कला को तिथि माना जाता है जो उन्नीस घण्टे से 24 घण्टे की हो सकती है। अमावस्या के बाद प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक की तिथियों को शुक्लपक्ष तथा पूर्णिमा से अमावस्या तक की तिथियों को कृष्ण पक्ष कहते हैं।

**तिथि** -

सूर्य एवं चन्द्र के समागम के बाद दोनों ग्रहों में उत्तरोत्तर दूरी में अन्तर आता जाता है जब शीघ्र गतिमान चन्द्र 12 अंश तक जाता है, उस अन्तर को प्रतिपदा तिथि कहते हैं। इसी प्रकार 12-24 अंशान्तर को द्वितीया। एवमेव क्रमशः 12-12 अंशों की वृद्धि से तिथियों का वृद्धि क्रम भी चलता रहता है और 168 से अन्तोगत्वा, पूर्णिमा को सूर्य-चन्द्र में 180 अंश का अन्तर हो जाने पर पर पूर्ण चन्द्र दिखाई देता है और इसी के साथ शुक्ल पक्ष समाप्त हो जाता है। कृष्णपक्ष को चन्द्र के 180 से अंश 12 अंश न्यून करने पर 168 पर प्रतिपदा तथा प्रतिदिन 12 अंश क्षीण होने से द्वितीयादि तिथियों का निर्माण होने लगता है। इस प्रकार क्रमशः चन्द्र अपनी गति करते हुए चन्द्र 0 अंश पर पहुँच कर अमावस्या तिथि के साथ कृष्णपक्ष की समाप्ति होती है।

नाक्षत्र मास में नक्षत्र शान्ति, जलपूजन आदि कार्य करने चाहिए।

**ध्यातव्य- चान्द्रमान का प्रयोग-** तिथि, करण, विवाह, मुण्डन, जातकर्म व्रत-उपवास, यात्रादि तथा अन्य सभी कार्य, चान्द्रमान से किए जाते हैं।

**तिथिः करणमुद्वाहः क्षौरं सर्वक्रियास्तथा ।**

**व्रतोपवासयात्राणां क्रिया चान्द्रेण गृह्यते।।14.13**

## 2.9. नाक्षत्रमान -

नक्षत्रमण्डल के दैनिक भ्रमण का कालमान एक नाक्षत्र दिन होता है अर्थात् नक्षत्र के एक उदय से दूसरे उदय तक का काल नाक्षत्र दिन होता है। वसन्त सम्पात बिन्दु जिस क्षण याम्योत्तर वृत्त पर आता है, उस क्षण से वह बिन्दु पुनः याम्योत्तर वृत्त पर आता है, उस क्षण तक के समय को नाक्षत्र दिन कहते हैं। अर्थात् चन्द्रमा अश्विनी से लेकर रेवती पर्यन्त के नक्षत्र में विचरण करता है वह काल नक्षत्रमास कहलाता है। **नक्षत्रचक्रे चन्द्रस्य योगाः वृत्या यदा तदा। मासोनाक्षत्रनामायं व्यवहार्यः प्रसिद्धिदः। (मु.वि.8)** नक्षत्र चक्र में चन्द्रमा का जब प्रत्येक नक्षत्र से योग होकर पुनरावृत्ति योग होता है, उसे नाक्षत्र मास कहते हैं। यह नक्षत्र मास व्यवहार करने योग्य और प्रसिद्ध है ।।8।। नाक्षत्र अहोरात्र का प्रमाण मध्यम मान के

अनुसार 60 घटी तुल्य होता है **"नाडीषष्ठ्या तु नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम् ।"**परन्तु स्पष्ट मान 59.50.10 होता है अर्थात् समय 23 घण्टा, 56 मिनट और 4 सेकेण्ड के तुल्य। यथा सूर्यसिद्धान्त में आर्ष वचन-

**भचक्रभ्रमणं नित्यं नाक्षत्रं दिनमुच्यते।**

**नक्षत्रनाम्ना मासास्तु ज्ञेया पर्वान्तयोगतः ।।15।।**

**कार्त्तिकादिषु संयोगे कृत्तिकादि द्वयं द्वयम्।**

**अन्त्योपान्त्यौ पञ्चमश्च त्रिधा मासोत्रयं स्मृतम्।।16।।**

मासों के नामकरण का आधार भी नक्षत्र ही हैं। पूर्णिमा के अन्त में चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है, उसी के नाम पर मासों का नामकरण भी होता है।यथा-

**पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा जिस नक्षत्र में रहता है उसके अनुसार मासों के नाम-**

- चैत्र : चित्रा, स्वाति।
- वैशाख : विशाखा, अनुराधा।
- ज्येष्ठ : ज्येष्ठा, मूल।
- आषाढ़ : पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, शतभिषा।
- श्रावण : श्रवण, धनिष्ठा।
- भाद्रपद : पूर्वभाद्र, उत्तरभाद्र।
- आश्विन : अश्विन, रेवती, भरणी।
- कार्तिक : कृतिका, रोहणी।
- मार्गशीर्ष : मृगशिरा, उत्तरा।
- पौष : पुनर्वसु, पुष्य।
- माघ : मघा, अश्लेषा।
- फाल्गुन : पूर्वाफाल्गुन, उत्तराफाल्गुन, हस्त।

**नक्षत्रद्वितयेष्विन्दौ पूर्णेत्वाष्ट्रा द्वये ततः।**

**मासाश्चैत्रादयः षड्भिः षडासप्तान्त्यत्रिभिः ।।10।।**

चित्रा स्वाती नक्षत्र में पूर्णिमा हो तो चैत्र मास अर्थात् चित्रादि दो-दो नक्षत्रों से युत-चैत्रादि मास होते हैं किन्तु छटवां, सातवां और बारहवां मास तीन नक्षत्रों से युक्त होता है। **(मु.वि. 10)**

भचक्र (नक्षत्र मण्डल) का दैनिक भ्रमण एक नाक्षत्र दिन होता है। पर्वान्त से (पूर्णिमा के दिन ) जो नक्षत्र होता है उसी नक्षत्र के नाम से मासों के नाम का नामाकरण होता है। कृत्तिकादि दो दो नक्षत्रों के संयोग से कार्तिक आदि मास, अन्तिम, उपान्तिम और पाँचवां मास तीन-तीन नक्षत्रों के संयोग से होते हैं । यथा-

कृतिका या रोहिणी पूर्णिमा को हो तो कार्तिक, मृगशीर्ष या आर्द्रा से मार्गशीर्ष आदि मास होते हैं। अन्तिम (कार्तिकादि गणना से) आश्विन, उपान्तिम भाद्रपद तथा पञ्चम फाल्गुन मास तीन-तीन नक्षत्रों से होते हैं। जैसे-पूर्वफाल्गुन, उत्तर फाल्गुन, हस्त इन तीन नक्षत्रों से फाल्गुन मास होता है।

## इकाई का सारांश-

ब्रह्ममान का सम्बन्ध ब्रह्म से, दिव्य का देव और दैत्यों से, पित्र्य का पितरों से, प्राजापत्य का मनु से, गौरव का बृहस्पति से, सौर का सूर्य से अर्थात् वर्ष,अयन, ऋतु, संक्रान्ति, पुण्यकाल आदि का विचार करते हैं। सावन का भूमि से अर्थात् यज्ञादि, जन्मादि सूतकों का निर्धारण। चान्द्र का चन्द्र से अर्थात् इसका विचार तिथि, करण, विवाह, क्षौरकर्म, जातकर्म नामकरण, चूडाकरण, उपनयनादि संस्कारों, व्रत, उपवास आदि का निर्धारण। नाक्षत्रमान का सम्बन्ध नक्षत्रों से होता है तथा इसका व्यवहार में प्रयोग घटि, पल, विपलादि के निर्णय में करते हैं। इस प्रकार **नवविध कालमानों** में सौर, चान्द्र, नाक्षत्र एवं सावन मानों को व्यवहार में प्रयोग करते हैं। बार्हस्पत्य मान के द्वारा 60 संवत्सरों का ज्ञान तथा ब्राह्म, पित्र्य, दिव्य एवं प्राजापत्य मानों का नित्य व्यवहार में प्रयोग नहीं होता है।

**चतुर्भिर्व्यवहारोऽत्र सौरचान्द्रार्क्षमावनै : ।**

**ब्रार्हस्पत्येन षष्ट्यब्दं ज्ञेयं नान्यैस्तु नित्यश: ।। (सू.सि.2)**

.........................................इति .......................................

प्रश्न-1. काल कितने प्रकार के होते है? दो ।

प्रश्न-2. ज्योतिषशास्त्र में कितने स्थूल कालों का वर्णन किया गया है? **नौ**।

प्रश्न-3. व्यावहारिक समय की गणना किस काल से की जाती है? **मूर्त संज्ञक काल से**।

प्रश्न-4. सुई से कमल के पत्ते में छेद करने पर लगने वाले समय को कहते हैं? **सूक्ष्मकाल**।

प्रश्न-5. भचक्र (नक्षत्र मण्डल ) के दैनिक भ्रमण कौनसा दिन होता है? **एक नाक्षत्र।**

प्रश्न-6. कितने महायुगों का 1 मनु प्राजापत्य मान कहा गया है? **71 महायुगों का।**

प्रश्न-7. संवत्सर कितने होते हैं? **60 संवत्सर।**

प्रश्न-8. तिथि, करण, विवाह, मुण्डन, जातकर्म व्रत-उपवास, यात्रा की क्रियाएँ तथा अन्य सभी कार्य, किस मान के अनुसार होते हैं? **चान्द्रमान से।**

प्रश्न-9. संक्रान्तियों का पुण्यकाल किस मान से ज्ञात किया जाता है? **सौरमान से** ।

प्रश्न-10. कितनी तिथियों का एक चान्द्रमास होता है? **30 तिथियों का** ।

प्रश्न-11. एक महायुग में कितने दिव्यवर्ष होते हैं? **बारह हजार।**

प्रश्न-12 एक कल्प में कितने मनु होते हैं? **14 मनु**

प्रश्न-13 पूर्णिमा को सूर्य एवं चन्द्र में अन्तर कितना होता है? 180

प्रश्न-14. अमावस्या को सूर्य व चन्द्र में अन्तर होता है? 0

प्रश्न-15. कितनी तिथियों का एक चान्द्रमास होता है? **30 तिथियों का**

प्रश्न-16. एक महायुग में ब्रह्मा के कितने दिन होते हैं? **एक दिन।**1

**निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-**

प्रश्न-1. कालः सृजति .................कालः संहरति प्रजाः। **भूतानि।**

प्रश्न-2. सूर्य से चन्द्रमा केसूर्य से चन्द्रमा के ..............आगे जाने पर 1 तिथि होती है।**12 अंश**

प्रश्न-3. 15 मनु (मन्वन्तर व्यवस्था ) का ..... ........मान होता है। **प्राजापत्य।**

प्रश्न-4.

**बोध प्रश्न-** मध्यमान से गुरु का एक राशि चलन..........................।**एक संवत्सर**

1. स्थूल कालमान कितने प्रकार के होते है परिचय दीजिए?
2. सौर एवं चान्द्रमास का वर्णन कीजिए?
3. सावनमास का विस्तृत रूप से वर्णन कीजिए?
4. ब्रह्म अहोरात्र व्यवस्था का वर्णन कीजिए?

5. बार्हस्पत्य मान का सक्षिप्त परिचय दीजिए?

6. चान्द्रमान का विवेचन कीजिए?

7. कालमानों का परिचय कराते हुए दैनिक जीवन में कालमान की उपयोगिता का वर्णन कीजिए?

# इकाईः 4 वैदिक प्रमुख मुहूर्त्त एवं ग्रहबल विचार

**प्रस्तावना-** इस इकाई में, हम ग्रहों के बलों के बारे में जानेंगे कि उनकी क्या आवश्यकता है? और जगत पर उनका प्रभाव कैसे पड़ता है? तथा क्यों पड़ता है? ग्रह बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय हैं, जो एक राशि से दूसरी राशि में एवं भावों में जाने से अपने बल के अनुसार विश्व की घटनाओं पर क्या प्रभाव डालते हैं? और लोगों के जीवन में उनके कारण क्या- क्या घटनाएँ घटित होती हैं? ग्रह मेषादि राशियों में व तनु,धन आदि भावों में प्रवेश करते ही तथा अपनी दृष्टि से उन बारह राशियों एवं बारह भावों में अपने गुण का प्रभाव अवश्य छोड़ते हैं। उसी ग्रहों के गुण के कारण जगत में तथा उसमे निवास करने वाले लोगों के दैनन्दिन जीवन में ग्रहबल और ग्रहदृष्टि के कारण अनेक प्रभाव देखने को मिलते हैं। जैसा कि इसका समाधान अपने ग्रन्थ **षट्पञ्चाशिका में पृथुयशसा** ने कहा है कि-

**यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्यास्ति वृद्धिः ।**

**पापैरेवं तस्य भावस्य हानि- र्निर्देष्टव्या पृच्छतां जन्मतो वा ।। ३ ।।**

अनेक योजना और तकनीकी से उद्योग प्रारम्भ करने पर भी उसमें सफलता नहीं मिलती है क्योंकि उपर्युक्त आकाश में गतिशील सूर्यचन्द्रादिग्रहों से विश्व के लोग प्रभावित होते हैं। इसी कारण ऋषि लोकोपकार के लिए प्रत्येक कार्य के लिए समुचित मुहूर्त्तों का विधान निर्दिष्टित किए है, उनका दैनन्दिन जीवन में सभी मानव अपने- अपने उचित काल के अनुसार कार्य करते हैं यथा कृषिक बीजवोने के लिए, फसल काटने के लिए, उद्योगपति क्रयविक्रयादि व्यवहार व निर्माण में, गृहपति गृहनिर्माण- गृहप्रवेशादि ऋषियों द्वारा निर्दिष्ट मुहूर्त्त के अनुसार प्रारंभ करते हैं।

## 4.1. वैदिक प्रमुख मुहूर्त्त -

**द्वादशाक्षि निमेषस्तु लवो नामाभिधीयते।**

**लवस्त्रिंशत् कलाज्ञेया कलात्रिंशत् त्रुटिर्भवेत् ।।**

आँख के एक पलक को 12 बार झपकने में, जितना समय लगता है उसको एक लव कहते है। तीस लव (360 बार पलक झपकने में जितना समय लगता है) की एक कला होती है और तीस कला की एक त्रुटि होती है।

**त्रुटीनान्तु भवेत् त्रिशन्मुहूर्तस्य प्रयोजनम्।**

**द्वादशाङ्गुलमुच्छेषं तस्य छाया प्रमाणतः।।**

तीस त्रुटियों का एक मुहूर्त्त होता है जिसका ज्ञान, बारह अङ्गुल की एक लकडी को समतल भूमि पर गाड़कर उसकी छाया के माप के अनुसार ज्ञात किया जा सकता है।

**नवति षडङ्गुलाश्चैव प्रतीचीं तां प्रकाशयेत्।**

**पुरस्तात् सन्धि वेलायां मुहूर्तो रौद्रउच्यते ।।**

प्रातःकाल सूर्योदय की सन्धि वेला में उस लकडी की छाया पश्चिम दिशा की ओर 96 अंगुल की होगी एवं सामने जब यह छाया 61 अंगुल तक पहुँच जाए तो रौद्र नाम का मुहूर्त्त होता है।

**श्वेतः षष्टिः समाख्यातो मैत्रोवै द्वादशांगुलः।**

**षट् सुसारभटोज्ञेयः सावित्रः पञ्चसुस्मृतः ।।**

जब 60 अंगुल से लेकर 13 अंगुल की छाया हो तो 'श्वेत' नाम का मुहूर्त्त, 12 से सात अंगुल तक 'मैत्र' नाम मुहूर्त्त, 6 अंगुल छाया पर 'सारभट' नाम का मुहूर्त्त और पाँच अंगुल छाया पर 'सावित्र' नाम का मुहूर्त्त होता है।

**चतुर्षु चैव वैराजस्त्रिषु विश्वावसुस्तथा।**

**मध्याह्नेचाभिजिन्नाम यस्मिन् छाया प्रतिष्ठति ।।**

चार अंगुल की छाया पर 'वैराज' नाम का मुहूर्त्त, तीन अंगुल पर 'विश्वावसु' और मध्याह्न में छाया उस लकडी के मूल में पड़े तो 'अभिजित' नाम का मुहूर्त्त होता है।

**प्राचीं वैनामिनीं छायां रौहिणस्त्रिषु वर्तते।**

**बलश्चतुषु विख्यातो विजयः पञ्चसु स्मृतः ।।**

जब पश्चिम दिशा में लौट कर सायंकाल के समय छाया पूर्व को जाएगी उस समय तीन अंगुल की छाया तक 'रोहिण' नाम का मुहूर्त्त, चार अंगुल की छाया तक 'बल' नाम का मुहूर्त्त और पाँच अंगुल की छाया तक 'विजय' नाम का मुहूर्त्त समझना चाहिए।

**नैर्ऋतस्तु षडङ्गुल्यो वारुणो द्वादशाङ्गुलः।**

**सौम्यः षष्ठिः समाख्यातो भगस्तु परमस्तथा । ।**

इसके पश्चात् छः अंगुल छाया तक 'नैर्ऋत' नाम का मुहूर्त्त, बारह अंगुल तक 'वारुण', बारह से आठ अंगुल की छाया तक ''सौम्य' और 6० अंगुल छाया से 96 तक अर्थात् सूर्यास्त पर्यन्त 'भग' नामक मुहूर्त्त होता है।

**ऐते मुहूर्ता व्याख्याता दशद्वौच तथा त्रयः।**

**अहन्येव तु विज्ञेया रात्रावपि न संशयः ।।**

प्रातःकाल से सूर्यास्त पर्यन्त रौद्रादि 15 मुहूर्त्तों की व्याख्या की गई है और उस दिन के क्रम के अनुसार ही रात्रि में भी शंकु छाया के अनुताप से इन्ही मुहूर्तों को यथाक्रम समझना चाहिए।

**अत ऊर्ध्वंतु सर्वेषांमानुपूर्व्याच्छुमा शुभम्।**

**सर्वं विस्तरशस्ताँश्च तन्मे निगदितः शृणु ।।**

अतः 15 मुहूर्तों के शुभ और अशुभफल को विस्तार पूर्वक एवं क्रमशः कहता हूँ आप सुनें।

### 4.2. रौद्र मुहूर्त्त-

**रौद्रे रौद्राणि कुर्वीत रुद्र कार्याणि नित्यशः।**

**यच्चरौद्रं भवेत् किञ्चित् सर्वमेतेन कास्येत् ।।**

रुद्र कार्य करने हों तब रौद्र मुहूर्त्त में ही करना चाहिए, क्योंकि सभी प्रकार के भयंकर कार्यों की सफलता रौद्र नामक मुहूर्त्त में हो जाती है।

### 4.3. श्वेत मुहूर्त्त-

**श्वेते वासश्च स्नानं च ग्रामोद्यानं तथा कृषिः।**

**आरम्भाश्चात्रसिद्धयन्तियेचार्थाश्चिन्तिताः क्वचित् ।।**

श्वेत मुहूर्त्त में नवीन वस्त्र धारण करना, स्नान करना, ग्राम बसाना एवं उद्यान लगाना, कृषि कार्य का प्रारंभ करना तथा इसी प्रकार के अन्य चिन्तित कार्यों में सिद्धी होती है।

### 4.4. मैत्र मुहूर्त्त-

**मैत्रे मैत्राणि कुर्वीत मित्रकार्याणि नित्यशः।**

**पञ्चमैत्रं भवेत् किञ्चित् सर्वमेतेन कारयेत् ।।**

मैत्र मुहूर्त्त में मित्रता, सन्धि, सदैव शुभ एवं प्रशस्त कहा गए हैं।

### 4.5. सारभट मुहूर्त्त-

**अभिचारन्तु शत्रूणां कुर्यात् सारभटे न तु ।**

**आत्मार्थे सुहृदर्थे वा नश्यंते तस्य शत्रवः ।।**

शत्रुओं का अभिचार कर्म करना हो तो सारभट मुहूर्त्त में करने से अवश्य सफलता प्राप्त होती है।

### 4.6. सावित्र मुहूर्त्त-

**सावित्रेण मुहूर्तेन देव कार्याणि कारयेत्।**

**यज्ञन्विवाहानु द्वाहांश्चूडोपनयनानि च ।।**

देव कार्य, यज्ञ, सभी प्रकार के विवाह, चूडा कर्म और उपनयन आदि संस्कार 'सावित्र' मुहूर्त्त में करने चाहिए।

### 4.7. वैराज मुहूर्त्त-

**वैराजेन मुहूर्तेन राजा पौरूषमारभेत् ।**

**मेर्माणि पट दानानि शस्त्र कर्मच कारयेत् ।।**

राजाओं को पौरुष शक्ति का प्रदर्शन अर्थात् विजय प्राप्त करना हो, वस्त्रों का दान करना हो अथवा शस्त्रों का निर्माण कराना हो तब 'वैराज' मुहूर्त्त में करना चाहिए।

### 4.8.विश्वावसु मुहूर्त्त-

**विश्वावसौतु सवर्वार्थानारम्भाश्चात्र कारयेत्।**

**सर्वेषां च द्विजातीनां स्वाध्यायोऽत्र प्रशस्यते ।।**

सभी प्रकार के अर्थ सिद्धि के कार्य और द्विजातियों को स्वाध्याय संबंधी सभी कार्य प्रारंभ विश्वावसु मुहूर्त्त में करने चाहिए।

### 4.9. अभिजित्' मुहूर्त-

**ब्रह्म क्षत्रिय वैश्यानां शूद्राणां चापि नित्यशः।**

**सर्वेषामेव वर्णानां योगो मध्यं दिनेऽभिजित् ।।**

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रादि सभी वर्णों के के लिए मध्याह्न में आने वाला 'अभिजित्' मुहूर्त श्रेष्ठ होता है।

**अभिजित्सर्वकामाय सर्वकामार्थसाधनः ।**

**अर्थ सञ्चय मानानामध्वानं गन्तुमिच्छताम् ।।**

अभिजित मुहुर्त सब प्रकार की कामनाओं की सिद्धी करने वाला है। तथा यही मुहूर्त्त धन-संग्रह, सम्मान हेतु किसी प्रकार की यात्रा करने पर अवश्य सफलता प्राप्त होती है।

### 4.10 रौहिण मुहूर्त्त-

**रौहिणेवापिता वृक्षा विल्व गुल्म लतास्तथा।**

**अरोगाः पुष्पवन्तश्च फलवन्तश्च नित्यशः ।।**

रौहिण मुहूर्त्त में वृक्ष, बेल एवं लतायें लगाएँ तो सर्वदा नीरोग, फूल एवं सुंदर फल लगे रहते हैं।

### 4.11.बल मुहूर्त्त-

**वलेन तु वलं राजा स्वयमारुह्य योजयेत् ।**

**योगः सम्पत्तितं कार्यं शत्रूश्च वषमेजयेत् ।।**

बल मुहूर्त्त में राजाओं को स्वयं ही सेना का संचालन करना चाहिए और इसी मुहूर्त्त में शत्रु की सेना पर भी आक्रमण करने से विजय अवश्य प्राप्त होती है।

### 4.12. विजय मुहूर्त्त

**विजये न प्रयातस्य विजयो नात्र संशयः ।**

**मंगलान्यत्र कुर्वीत शान्ति स्वस्त्ययनानि च । ।**

विजय मुहूर्त्त में चढ़ाई करने से अवश्य विजय प्राप्त होती है इसमें संशय नहीं। स्वस्ति वाचन तथा शान्ति पाठ आदि मंगलाचार कार्यों के लिए भी यह मुहूर्त्त शुभ होता है।

### 4.13. नैर्ऋत मुहूर्त्त-

**नैऋते घातयेत्सेनां परराष्ट्रतु मर्दयेत् ।**

**कर्तुः सम्पत्करो ह्येषः सर्व शत्रु निवर्हणः ।।**

नैर्ऋत मुहूर्त्त में दूसरे राष्ट्रों पर आक्रमण करके उनकी सम्पूर्ण सेना को नष्ट किया जा सकता है और पराजित शत्रु की सम्पत्ति भी इसी मुहूर्त्त में आक्रमण करने से प्राप्त होती है।

### 4.14. वारुण मुहूर्त्त-

**वारुणेन मुहूर्तेन वारुणानि प्रवापयेत् ।**

**गोधूमान्यव शालींश्चरण कांश्चोत्पलानि च।।**

वारुण मुहूर्त्त में जल में उत्पन्न होने वाले धान्य, गेहूँ, जौ, चावल, चना तथा कमलों के बीजादि को बोना शुभ होता है।

### 4.15. सौम्य मुहूर्त्त-

**सौम्ये सौम्यानि कुर्वीत सौम्य कार्याणि निरयशः।**

**यच्च सौम्यं भवेत्किञ्चित् सर्वमेतेन कारयेत् ।।**

सौम्य मुहूर्त्त में प्रारंभ किया जाए तो सर्वदा ही सफलता प्राप्त होती है।

### 4.16. भग मुहूर्त्त-

**सर्वासामिव नारीणां कन्यानां च विशेषतः।**

**सौभाग्यानि प्रयुञ्जीत भगे भीम पराक्रमे ।।**

भग मुहूर्त्त में सभी स्त्रियों के और कन्याओं के सौभाग्य कार्य अर्थात् पाणिग्रहण संस्कार आदि शुभ कार्य करने चाहिए।

**भगेन वरयेत्कन्यां ब्राह्मणीं कुल वर्धिनीम्।**

**भगेन वरिता कन्या नैव सान्यत्र गच्छति ।।**

भग मुहूर्त्त में कन्या का विवाह करने से कुल की वृद्धि होती है और वह कन्या पति को छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं जाती है।

### 4.17 ग्रहबल विचार-

ग्रहों के छ: प्रकार के बल होते हैं - 1. कालज बल, 2. चेष्टाबल, 3. उच्चज बल, 4. दिग्बल, 5. अयनबल 6. स्थानबल।

**कालबल** - मङ्गल, चन्द्रमा एवं शुक्र रात्रि में, बुध दिन और रात्रि दोनों में तथा शेष सूर्य, बृहस्पति व शनि दिन में कालबल प्राप्त करते हैं। अतिरिक्त शुक्लपक्ष में शुभग्रह पूर्ण चन्द्रमा, बृहस्पति, शुक्र और शुभग्रह के साथ बुध तथा कृष्णपक्ष में पापग्रह रवि, मङ्गल, शनि, क्षीण चन्द्रमा और पापग्रह से संयुक्त बुध कालबली

होते हैं। इसी प्रकार अपने वर्ष में अपने मास में, अपने दिन में, और अपनी होरा में सभी ग्रह कालबल प्राप्त करते हैं। जैसा कि मन्त्रेश्वर ने फलदीपिका में वर्णन किया है-

**वीर्यं षड्विधमाह कालजबलं चेष्टाबलं स्वोच्चजं**

**दिग्वीर्यं त्वयनोद्भवं दिविषदां स्थानोद्भवं च क्रमात्।**

**निश्यारेन्दुसिताः परे दिवि सदा ज्ञः शुक्लपक्षे शुभाः**

**कृष्णेऽन्ये च निजाब्दमासदिनहोरास्वङ्घ्रिवृद्ध्या क्रमात् ॥1॥**

**क्रमेण दृक्स्थाननिसर्गचेष्टादिक्कालवीर्याणि च षड्बलानि।**

**सुधाकरेष्विन्दुशरन्दुशैलभेदानि तानि प्रवदन्ति सन्तः ।।38।।( जातकपारिजात)**

**चेष्टाबल-** पूर्ण चन्द्रमा चेष्टाबली होता है, उत्तरायण होने पर सूर्य एवं वक्र गति प्राप्त करने पर अन्य भौमादि ग्रह चेष्टाबल प्राप्त करते हैं। युद्धरत ग्रहों में उत्तरशर युक्त ग्रह विजयी एवं चेष्टाबली होता है। सम्पूर्ण रश्मियों से युक्त ग्रह भी चेष्टाबली होता है।

**उच्चबल-** अपनी परम-उच्चावस्था में स्थित ग्रह उच्चबल प्राप्त करता है।

**दिग्बल-** सूर्य व मङ्गल दशम भाव में, चन्द्रमा और शुक्र चतुर्थ भाव में, बुध एवं देवगुरु बृहस्पति लग्न में तथा सप्तम भाव में सूर्यपुत्र शनिग्रह दिग्बलशाली होते हैं। यथा-

**राकाचन्द्रस्य चेष्टाबलमुदगयने भास्वतो वक्रगानां**

**युद्धे चोदक्स्थितानां स्फुटबहुलरुचां स्वोच्चवीर्यं स्वतुङ्गे ।**

**दिग्वीर्यं खेऽर्कभौमौ सुहृदि शशिसितौ विद्गुरू लग्नगौ चे-**

**न्मन्देऽस्ते याम्यमार्गे बुधशनिशशिनोऽन्येऽयनाख्ये परस्मिन् ॥२॥**

**अयनबल-** बुध, शनि एवं चन्द्रमा दक्षिणायन में तथा शेष ग्रह सूर्य, मङ्गल, बृहस्पति और शुक्र उत्तरायण होने पर अयन बली होते हैं।

लेकिन सारावली में दिक्, स्थान, काल और चेष्टा बल के साथ- साथ स्वोच्च, स्वस्थान, मित्रराशि एवं स्वनवांश में स्थित ग्रहों को भी स्थानबली कहा गया है। स्वराशि (सम) राशि में स्थित चन्द्रमा तथा शुक्र को स्थानबली कहा गया है। अन्य ग्रह पुरुष (विषम) राशि में स्थानबल प्राप्त करते हैं ।

दिक्स्थानकालचेष्टाकृतं बलं सर्वनिर्णयविधाने।

वक्ष्ये चतुःप्रकारं ग्रहस्तु रिक्तो भवेदबलः ॥

लग्ने जीवबुधौ दिवाकरकुजौ व्योम्नि स्मरे भास्करि-

र्बन्धाविन्दुसितौ दिशाकृतमिदं स्वोच्चे स्वकोणे स्वभे ।

मित्रस्वांशकसंस्थितः शुभफलैर्दृष्टो बलीयान ग्रहः

स्त्रीक्षेत्रै शशिभार्गवौ नरगृहे शेषा बले स्थानजे ॥

जीर्वार्कास्फुजितोऽह्नि विच्च सततं मन्देन्दुभौमा निशि

होरामासदिनान्दपाश्च बलिनः सौम्याः सितेऽन्येऽसिते ।

संग्रामे जयिनो विलोमगतयः सम्पूर्णगावो ग्रहाः

सूर्येन्दू पुनरुत्तरेण बलिनौ सत्योक्तचेष्टाबले ॥ (सारावली)

**स्थानबल-**

ग्रह यदि षड्वर्ग में अपनी उच्चराशि, अपनी राशि, अपने मित्रग्रह की राशि के वर्ग में हों तो वे स्थानबली होते हैं। केन्द्र, पणफर एवं आपोक्लिम भावों में स्थित ग्रह भी स्थानबली होता है। केन्द्र में पूर्ण बल, पणफर में आधा और आपोक्लिम में चतुर्थांश स्थान बल होता है तथा नपुंसक ग्रह राशि के मध्य भाग में, पुरुष ग्रह राशि के आदि भाग में तथा स्त्री ग्रह राशि के अन्तिम भाग में बली होते हैं।

**इसे भी समझे-**
नपुंसक ग्रह राशि के मध्य भाग (11 अंश से 20 ) में, पुरुष ग्रह राशि के आदि भाग ( 1 अंश से 10 ) में तथा स्त्री ग्रह राशि के अन्तिम भाग (21अंश से 30 ) में बली होते हैं।

**नैसर्गिक-** शनि, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा और सूर्य क्रमशः नैसर्गिक रूप से बली होते हैं। अर्थात् शनि से बली मंगल, मंगल से बली बुध, बुध से बली बृहस्पति आदि।

स्वोच्चस्वर्क्षसुहृद्गृहेषु बलिनः षड्‌सु स्ववर्गेषु वा

प्रोक्तं स्थानबलं चतुष्टयमुखात्पूर्णार्द्धपादाः क्रमात् ।

मध्याद्यन्तकषण्डमर्त्यवनिताः खेटा बलिष्ठाः क्रमात्

मन्दारज्ञगुरूशनोब्जरवयो नैजे बले वर्द्धनाः।।3।।

ग्रह अपनी नीच, शत्रुराशि या नवांश में होते हुए भी यदि ग्रह वक्री हो या फिर अपनी पूर्ण रश्मियों से युक्त हो तो वह बलवान् होता है तथा अपनी उच्चराशि, मित्रराशि या इनके नवांशों में होने पर भी यदि वह अस्त हो तो भी चन्द्रमा के सदृश निर्बल होता है।

**इसे भी समझे-** वृष व कर्क में स्थित चन्द्र यदि अमावस्या का चन्द्र हो तो निर्बल और यदि वृश्चिक का चन्द्र यदि पूर्णिमा तिथि का हो तो बली होता है। अन्य ग्रहों का विचार करते समय भी यह विचार अवश्य करें।

**वक्रं गतो रुचिररश्मिसमूहपूर्णो**
**नीचारिभांशसहितोऽपि भवेत्स खेटः ।**
**वीर्यान्वितस्तुहिनरश्मिरिवोच्चमित्र –**
**स्वक्षेत्रगोऽपि विबलो हतदीधितिश्चेत् ॥4॥**

समस्त ग्रह अपनी उच्चराशि में बलवान् होते हैं। चन्द्रमा अपने सम्पूर्ण पक्षबल को प्राप्त कर बलवान् व शुभ फलप्रदाता होता है। दिग्बली सूर्य दशम भाव में बलवान् होता है। अन्य शेष भौमादि ग्रह वक्री होने पर पूर्ण बली होते हैं। यदि जन्म रात्रि में हो तो राहु कर्क, वृष, कन्या, कुम्भ और वृश्चिक राशियों में तथा केतु मीन, कन्या, वृष और धनु के उत्तरार्ध में, परिवेश (परिधि) और इन्द्रचाप (इन्द्रधनुष) के योग में सूर्य चन्द्रमा के साथ बलवान् होते हैं।

**तुङ्गस्था बलिनोऽखिलाश्च शशिनः श्लाघ्यं हि पक्षोद्भवं**
**भानोर्दिगबलमाह वक्रगमने ताराग्रहाणां बलम्।**
**कर्क्युक्षाजघटालिगोहिरबलान्त्योक्षाश्चिपाश्चात्यगः**
**केतुस्तत्परिवेषधन्वसु बली चेन्द्वर्कयोगो निशि ॥5॥**

**लग्न बल-**

पुरुष राशि (विषम राशि) यदि लग्न हो तो उसे 1 बल प्राप्त होता है अर्थात् वह पूर्ण बल होता है। यदि वृश्चिक राशि लग्नस्थ हो तो उसे पाद बल ही प्राप्त होता है। शेष राशियों के लग्नस्थ होने पर लग्न को आधा बल प्राप्त होता है। लग्नेश के बलवान् होने से लग्न भी लग्नेश के ही समान बलवान् होता है। लग्नेश यदि उपचय स्थानों (3, 6, 10,11वें भाव) में स्थित हो तो लग्नेश एवं लग्न पूर्णबली होते हैं। लग्न यदि लग्नेश, बुध या बृहस्पति से युत या दृष्ट हो और अन्य ग्रहों से युत या दृष्ट न हो तो वह बलवान् होता है । शुक्र से युत लग्न भी बलवान्

होता है, यदि अन्य ग्रहों (पाप ग्रहों) से युत-दृष्ट न हो शुक्र की युति ही बल प्रदान करती है, उसकी दृष्टि में उतना बल नहीं होता। दिन में जन्म हो तो दिवाबली राशि के लग्न और रात्रि में जन्म हो तो रात्रि बली राशि का लग्न बलवान् होता है। यथा-

**रूपं मानुषभेऽलिभेऽङ्घ्रिरपरेष्वर्द्धं बलं स्यात्तनोः**

**तुल्यं स्वामिबलेन चोपचयगे नाथेऽतिवीर्योत्कटम्।**

**स्वामीड्यज्ञयुतेक्षिति कवियुते चान्यैरयुक्तेक्षिते**

**शर्वर्यां निशि राशयोऽहनि परे वीर्यान्विताः कीर्तिताः ॥6॥**

**बल-परिमाण**

स्वकीय उच्चराशि में ग्रह हो तो पूर्ण बलवान् होता है, अपनी मूलत्रिकोण राशि में स्थित ग्रह को 3 बल प्राप्त होता है, अपनी राशि में स्थित ग्रह आधा और मित्रराशि चतुर्थांश बल प्राप्त करता है तथा शत्रुराशिस्थ ग्रह अत्यल्प बल से बली होता है। अस्त या अपनी नीच राशि में ग्रह निर्बल होते हैं। यथा फलदीपिका

**स्वोच्चे पूर्णं स्वत्रिकोणे त्रिपादं स्वक्षेत्रेऽर्द्धं मित्रभे पादमेव।**

**द्विटक्षेत्रेऽल्पं नीचगेऽस्तं गतेऽपि क्षेत्रं वीर्यं निष्फलं स्याद्ग्रहानाम् ॥7॥**

**केन्द्रस्थ ग्रह के बल- परिमाण**

**केन्द्रे ग्रहाणामुदितं बलं यत्सुखे नभस्यस्तगृहे विलग्ने ।**

**उपर्युपर्युक्तपदक्रमेण बलाभिवृद्धिं हि विकल्पयन्ति ॥8॥**

केन्द्रस्थ ग्रहों के बल चतुर्थ, दशम, सप्तम और लग्न में क्रमशः पादवृद्धि क्रम से होते हैं। अर्थात् लग्न में पूर्ण बल, सप्तम में त्रिपाद, दशम में अर्द्ध और चतुर्थ में चतुर्थांश( पाद) बल प्राप्त करते हैं।

**ग्रहों के दृष्टिबल**

ग्रहों की सप्तम दृष्टि ही सर्वाधिक बलशाली होती है। अन्य दृष्टियाँ उतनी बलशाली नहीं होतीं। अन्य आचार्यो के मतानुसार योगों में विशेष दृष्टियाँ बृहस्पति की पञ्चम और नवम भावों पर, मङ्गल की चतुर्थ और अष्टम भावों पर तथा शनि की तृतीय और दशम भावों पर होती हैं।

**श्रेष्ठेति सा सप्तमदृष्टिरेव सर्वत्र वाच्या न तथाऽन्यदृष्टिः।**

**योगादिषु न्यूनफलप्रदेति विशेषदृष्टिर्न तु कैश्चिदुक्ता॥9॥**

**'पश्यति सप्तमं सर्वे शनिजीवकुजा: पुनः।**

**विशेषतश्च त्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमानम्॥ (लघुपाराशरी)**

यदि ग्रह नैसर्गिक शत्रु हों तो अपनी महादशा व अन्तर्दशा में फल अच्छा नहीं देते है।

**शत्रु-मित्र-बल**

**नैसर्गिकं शत्रुसुहृत्त्वमेव भवेत्प्रमाणं फलकारि सम्यक्।**

**तात्कालिकं कार्यवशेन वाच्यं तच्छत्रुमित्रत्वमनित्यमेव ॥1०॥**

परस्पर ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता या शत्रुता ही प्रभावी होती है तात्कालिक मित्रता या शत्रुता अस्थायी होती है। अत: इसका विचार भी अस्थायी कार्यों में- तात्कालिक प्रश्न आदि में करना चाहिए।

**शुभता में बृहस्पति की सर्वोत्कृष्टता** – सभी दोषों को दूर करने में एवं शुभ फल की वृद्धि में बृहस्पति सबसे शक्तिशाली है। बृहस्पति से अर्द्ध शुक्र की, शुक्र से अर्द्ध बुध की और चन्द्र का बल सभी ग्रहों का मूल है। अर्थात् शुभता के लिए चन्द्रमा अवश्य बली होना चाहिए।

**निःशेषदोषहरणे शुभवर्द्धने च**

**वीर्यं गुरोरधिकमस्त्यखिलग्रहेभ्यः।**

**तद्वीर्यपाददलशक्तिभृतौ ज्ञशुक्रौ**

**चान्द्रं बलं तु निखिलग्रहवीर्यबीजम् ॥11॥**

बृहस्पति की दोष-निवारण की क्षमता और शुभफल वृद्धि की क्षमता समस्त ग्रहों की अपेक्षा अधिक होती है। पापत्व के निवारण और शुभत्व वृद्धि की यह क्षमता बुध में चौथाई और शुक्र में आधी होती है।

**ग्रहों का स्थान बल-**

**स्वोच्चत्रिकोणस्वसुहृद्दृगाणराश्यंशवैशेषिकवर्गवन्त।**

**आरोहवीर्याधिकविन्दुकास्ते खेचारिणः स्थानबलाधिकाःस्युः।।33।।**

**नीचापरिपापखगयोगनिरीक्ष्यमाणास्तदूर्गसन्धिलघुबिन्दुदुरंशकाश्च।**

**आदित्यरश्मिपरिभूतपराजितास्ते दृष्ट.यादिशक्त्यसहिताश्च न शोभनाःस्युः।।34।।**

अपने-अपने उच्च, त्रिकोण, मित्रगृह, द्रेष्काण, राशि, नवांश में स्थानबली होते हैं। एवं नीच और शत्रुगृह में रहने वाले,पापगृहो से युक्त तथा दृष्ट, पापवर्ग ,भन्धि ,पापांश वाले ,सूर्य के किरण में व्याप्त (अस्त ) और दृष्टि बल से हीन ग्रह शुभ नहीं होते ,अर्थात ये अशुभ होते हैं।

**ग्रहों के दिग्बल-**

**विलग्नपातालवधूनभोगा बुधामरेज्यौ भृगुसूनुचन्द्रौ ।**

**मन्दो धरासूनुदिवाकरौ चेत् क्रमेण ते दिग्बलशालिनःस्युः।।35 ।।**

लग्न में बुध और बृहस्पति, सुख (चतुर्थ) में शुक्र और चन्द्र, दशम में मंगल और सूर्य दिग्बली हैं।

**जैत्रा वक्रसमागमोपगसितज्ञारामरेज्यासिताः ,**

**दिव्याशायनगेन्दुत्रिग्मकिरणौ चेष्टाबलांशाधिका ।।36 ½ ।।**

शुक्र ,बुध ,मङ्गल ,गुरु और शनि ये ग्रह यदि युद्ध में विजयी हों, वक्री हों या चन्द्रमा से युक्त हों तो उसके चेष्टाबल पूर्ण होते हैं चन्द्र और सूर्य के उत्तरायन में चेष्टाबल अधिक होते हैं।

**ग्रह स्थान विशेष में शुभाशुभ-**

**कामावनीनन्दनराशियाताः सितेन्दुपुत्रामरन्यमानाः।**

**अरिष्टदास्तेऽखिलजातकेषु सदाऽष्टमस्थः शनिरिष्टदः स्यात्।।52 ।।**

शुक्र, बुध और बृहस्पति क्रम से सातवें ,चौथे और पाँचवें भाव में प्राप्त हों तो प्रत्येक जातक में अरिष्टकारक होते हैं। शनि अष्टम भाव में होने पर सर्वदा मनोरथ पूरा करता हैं।

**इकाई का सारांश**- शुभ और अशुभ ग्रह अपने -अपने नाम के अनुरूप जातक को शुभ एवं अशुभ परिणाम देते हैं। अर्थात् शुभ ग्रह अपनो स्वगृह, उच्च राशि, मित्र राशि, भाव, षडबलों व अपने मित्रों से दृष्ट और शुभ ग्रहों से संयुक्त होने पर शुभ फल देते हैं। अशुभ ग्रह अपनी नीच राशि और शत्रु राशियों से युत होगा तो यह अच्छे परिणाम नहीं देंगे। यह भी ध्यान में रखें कि अशुभ ग्रह हमेशा अशुभ फल नहीं देता है। पुन: ग्रहों का शुभ और अशुभ प्रभाव उनके अनेक कारकों पर निर्भर करता है कि कौन किसका मित्र और शत्रु है? किसी ग्रह का सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव इस बात पर भी निर्भर करता है कि जो ग्रह भाव में है, वह शत्रु और मित्र राशि ग्रह के साथ है या फिर नहीं। जैसा कि कुज सूर्य का मित्र है तथा सूर्य भी मंगल, चंद्रमा और बृहस्पति का मित्र है। अतः जब भी किसी भाव में सूर्य इन राशियों में आएगा, तो जातक के लिए शुभ परिणाम ही देगा। लेकिन सूर्य अपनी शत्रु राशि या नीच्च राशि तुला में युति करेगा तो जातक के लिए शुभ नहीं होगा। सम्पूर्ण होरा फल के सार तत्त्व ग्रहों के बलाबल का इस इकाई में वर्णन किया गया है।

**।। तृतीय इकाई समाप्त ।।**

**लघूत्तरीय प्रश्न-**

1. ग्रहों के कितने प्रकार के बल होते हैं? **छ: प्रकार के** ।

2. शुभता में सबसे बली ग्रह कौनसा है? **गुरु**।

3. अयन बल के अनुसार दक्षिणायन होने पर कौनसे ग्रह बली होते हैं? **बुध, शनि और चन्द्रमा** ।

4. ग्रहों के कितने प्रकार के बल होते हैं? **छः प्रकार के**।

5. चन्द्र क्रिया कितने प्रकार की होती हैं? **60 प्रकार की , अवस्था 12, वेला 36** ।

6. दिन और रात में कितने- कितने मुहूर्त्त होते हैं- **15-15 मुहूर्त्त**

**निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-**

1.........का बल सभी ग्रहों का मूल है। **चन्द्रमा**।

**2.**ग्रहों की ..........सर्वाधिक प्रभावशाली होती है। **सप्तम दृष्टि।**

**3.**दशम में मंगल और सूर्य ................हैं। **दिग्बली।**

**4.**बुध, शनि और चन्द्रमा दक्षिणायन होने पर ............. अयनबली होते हैं। **दक्षिणायन।**

**बोध प्रश्न-**

1. जन्मकुण्डली द्वारा शिशु के शरीर का चिन्तन कैसे करते हैं?
2. ग्रहों के छः बलों का वर्णन कीजिए?
3. सूर्यादि ग्रहों की दृष्टिबल का क्या प्रयोजन है तथा उनकी विशेष दृष्टि का वर्णन कीजिए?
4. लग्न बल को स्पष्ट कीजिए।
5. सूर्य और मङ्गल राशि में कब फल देते हैं?
6. कालजबल का सविस्तार वर्णन कीजिए।

।।श्रीः।।

# इकाईः 5 भाव तथा भावों के विषय विचार

**प्रस्तावना-** आकाश में स्थित ग्रहों की स्थिति के आधार पर समय व जन्मकुण्डली का निर्माण कर तथा उनमें ग्रहों को आकाशीय स्थिति के अनुसार स्थापित कर फलादेश किया जाता है। कुण्डली में बारह भाव होते हैं। जातक की जन्मकुण्डली में विद्यमान द्वादश भावों में स्थित ग्रह स्थितियों के आधार पर ही उसके भूत-वर्तमान और भविष्य में होने वाली घटनाओं का फलादेश किया जाता है। कुण्डली में स्थित तनु, धन, सहज, बन्धु, पुत्र, शत्रु, जाया, रन्ध्र, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय आदि संज्ञाओं से जाना जाता है।

यथा- **तनुर्धनं च सहजो बन्धुपुत्रारयस्तथा ।**

**युवतीरन्ध्रधर्माख्यकर्मलाभव्ययाः क्रमात् ॥** (बृहत्पराशरहोराशास्त्र 8.37)

इन भावों द्वारा ही जातक के जीवन की तथा विश्व की तात्कालिक घटनाओं का ज्ञान करते हैं।

## भावविचार –

भावफल ज्योतिषशास्त्र का महत्त्वपूर्ण विषय है। भावों में ग्रहों के योग से फल निर्धारण होता है। भावज्ञान के विना शुभाशुभ फल का वर्णन नहीं कर सकते। यहाँ पर हम लग्न से द्वादशभावों का चिन्तन करेंगे-

**द्वादशभाव** -

जातक के जन्मकाल में जो राशि क्षितिज से संलग्न होती है उसे राशि लग्न कहते हैं। उससे लग्नादि द्वादशभावों की गणना करते हैं।भाव का निर्णय करते समय लग्नभाव को प्रथमभाव कहते हैं तत्पश्चात् अन्य भाव क्रमशः होते हैं यथा-

**भचक्रस्य समा भागा उक्ता द्वादश राशयः।**

**राशीनामुदयो लग्नं ते तु मेष-वृषादयः।।**

**शरीरमाद्यं खलुधर्मसाधनम्** इस वाक्य के अनुसार सर्वप्रथम शरीर की ही प्राधान्यता होती है। अतः प्रथम भाव को तनु कहते हैं। **भावास्तनुधनसहजबन्धुपुत्रारियुवतीरन्ध्रधर्मकर्मलाभव्ययाख्याः भवन्ति।** .२.51.

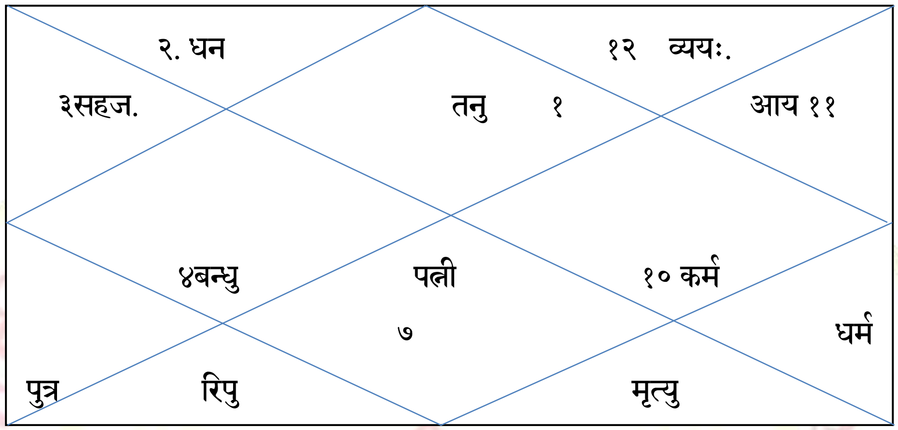


## 5.1 द्वादशभावों से चिन्तनीय विषय –

जहाँ भाव विचार के विषय में विचार किया जाता है वहाँ किस भाव से क्या विचार करना चाहिए।उसका अवश्य ध्यान रखना चाहिए।

**प्रथमभाव**- देह, रूप, वर्ण, बलाबल, सुख- दुःख, स्वभाव शीर्ष, वर्तमान की हालात और जन्म इन सब विषयों का प्रथम भाव अर्थात् लग्न से विचार करें।

**देहं रुपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाऽवलम्।**

**सुखं दुखं स्वभावश्च लग्नभावान्निरीक्षयेत्।।( बृ.पा,हो,12.2)**

**प्रकृतिं सुख-दुःखं च तनुभावात् विचिन्तयेत्। इति**

जातकपारिजात –

**शरीरवर्णाकृतिलक्षणानि यशोगुणस्थानसुखासुखानि।**

**प्रवासतेजोबलदुर्बलानि फलानि लग्नस्य वदन्ति सन्तः ।।**

फलदीपिका-

**लग्नं होरा कल्यदेहोदयाख्यं रूपं शीर्षं वर्तमानं च जन्म ।**

**इसे भी समझे** - लग्नेश जिस भाव में हो उस भाव को बल प्रदान करकर उस भाव के स्वामी के अनुसार यदि ग्रह निर्बल हो तो अनिष्ट फल एवं बलवान् हो तो उत्तम फल देता है। अर्थात् लग्नेश शुभ ग्रह हो या फिर पाप ग्रह वह जिस स्थान में बैठता है उस स्थान की वृद्धि करता है।

**5.2.द्वितीय भाव-** वित्त, मृत्यु ( मारकस्थान), शत्रु, धातु, स्वकीय सम्पत्ति, भोजन, दक्षिण नेत्र, आस्य (मुखाकृति), पत्रिका (लेखन), वाक् (वाणी) और कुटुम्ब इन सब विषयों का द्वितीय भाव विचार करना चाहिए।

**धनधान्यं कुटुम्बांश्च मृत्युजालममित्रकम्।**

**धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानान्निरीक्ष्येत्।।( बृ.पा,हो,12.3)**

**वित्तं विद्या स्वान्नपानानि भुक्ति दक्षाक्ष्यास्य पत्रिका वाक्कुटुम्बम् ॥1०॥**

**5.3.तृतीयभाव-** दुश्चिक्य, उर (वक्षःस्थल), दक्षिण कर्ण, सेना, धैर्य, शौर्य, विक्रम (पराक्रम), यात्रा, माता-पिता का वियोग, भृत्य, भाई एवं बहनों का विचार तृतीय भाव से करना चाहिए।

**विक्रमं भृत्यभ्रात्रादि चोपदेशप्रयाणकम्।**

**पित्रोर्वै मरणं विज्ञो दुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत्।।( बृ.पा,हो,12.4)**

**दुश्चिक्योरो दक्षकर्णं च सेनां धैर्यं शौर्यं विक्रमं भ्रातरं च।**

**5.4.चतुर्थभाव-** गृह, क्षेत्र ( कृषिगत भूमि), मातुल, भागिनेय (भांजा), बन्धु, मित्र, वाहन, माता, मातृसुख, बन्धु, निधि,राज्य, गोधन, भैंस, सुगन्ध, वस्त्र, आभूषण, पाताल ( जल, नदी, सेतु), सुख, हिबुक आदि का विचार चतुर्थभाव से करना चाहिए। **वाहनान्यथ बन्धूंश्च मातृसौख्यादिकान्यपि**

**निधिं क्षेत्रं गृहं चापि चतुर्थात् परिचित्येत्।।( बृ.पा,हो,12.6)**

**गेहं क्षेत्रं, मातुलं भागिनेयं बन्धुं, मित्रं वाहनं मातरं च ।। 99॥**

**5.5.पञ्चमभाव-** यन्त्र- मन्त्र, विद्या बुद्धि, के सहायक, राजाङ्क(शासन), सचिव ( मंत्री), कर, हानि, आत्मा, भविष्य ज्ञान, असु (पुत्र), श्रुति (वेद) स्मृति ( शास्त्रज्ञान) का विचार पञ्चम भाव से करना चाहिए।

**यन्त्र मन्त्री तथा विद्यां बुद्धेश्चैव प्रबन्धकम्।**

**पुत्रराज्यापभ्रंशादीन् पश्येत् पुत्रालयाद् बुधः।।( बृ.पा,हो,12.6)**

**राज्यं गोमहिषसुगन्धवस्त्रभूषाः पातालं हिबुकसुखाम्बुसेतुनद्यः ।**

**राजाङ्कं सचिवकरात्मधीभविष्यज्ज्ञानासून् सुतजठरश्रुतिस्मृतीश्च ॥1२॥**

**5.6.षष्ठभाव-** मातुल, शंका, वृणादि, सास, ऋण, अस्त्र, चोर, क्षत (घाव, चोट), रोग, शत्रु, ज्ञाति (सगोत्रिय), अजि (युद्ध, विवाद, झगड़ा), दुष्कर्म, अघ (पापकर्म), भीति (भय) और अवज्ञा (मानहानि, अपमान) आदि का विचार षष्ठभाव से करना चाहिए।

**मातुलान्तकशङ्कानां शत्रूंश्चैव व्रणादिकान्।**

**सपत्नीमातरं चापि षष्ठभावान्निरीक्षयेत्।।( बृ.पा,हो,12.7)**

**ऋणास्त्रचोर क्षतरोगशत्रून् ज्ञात्याजिदुष्कृत्यघभीत्यवज्ञाः।**

**5.7.सप्तमभाव-** चित्तोत्थ (हृदय की भावना), मद (कामवासना), , धून, अध्व (मार्ग), लोक, पति-पत्नी, अस्त, जामित्र,(सप्तमभाव) यात्रा, वाणिज्य व्यापार, स्वमरणादि का विचार सप्तमभाव से करना चाहिए।

**जायामध्वप्रयाणं च वाणिज्यं नष्टवीक्षणम्।**

**मरणं च स्वदेहस्य जायाभावान्निरीक्षयेत्।।**( बृ.पा,हो,12.8)

**जामित्रचित्तोत्थमदास्तकामान् द्यूनाध्वलोकान् पतिमार्गभार्याः ॥1३॥**

**5.8.अष्टमभाव-** माङ्गल्य (पति की आयु), रन्ध्र, मलिन, आधि (मानसिक चिन्ता), पराभव, आयु, क्लेश, संग्राम, शत्रु, दुर्ग, धननाश, पूर्व-अग्रिम जन्म का वृतान्त, अपवाद, मृत्यु, अशुचि( अपवित्रता), विघ्न (समस्या) और दास (नौकर) इस सब का विचार अष्टमभाव से करना चाहिए।

**आयू रणं रिपुं चापि दुर्गं मृतधनं तथा।**

**गत्युकादिकं सर्वं पश्येद्रन्धाद्विचक्षणः।।**( बृ.पा,हो,12.9)

**माङ्गल्यरन्धमलिनाधिपराभवायुः क्लेशापवादमरणाशुचिविघ्नदासान् ।**

**5.9.नवमभाव-** आचार्य, देवता, पितृ शुभ, पूर्व भाग्य, तीर्थयात्रा-पूजा, तप, सुकृत, पौत्र, जप, आर्यवंश, शाला,धर्म, भाइयों की पत्नी का विचार करना चाहिए।

**भाग्यं श्यालं च धर्मं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा।**

**तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानान्निरीक्षयेत्।।**( बृ.पा,हो,12.10)

**आचार्यदैवतपितृन् शुभपूर्वभाग्य पूजातपः सुकृतपौत्रजपार्यवंशान् ॥94॥**

**5.10. दसमभाव-** व्यापार, आस्पद (पद का नाम) , मान (सम्मान, प्रतिष्ठा), कर्म (व्यवसाय), जय सत् (शुभ), कीर्ति, क्रतु (यज्ञादि कर्म), जीविकोपार्जन, व्योम (ऊर्ध्वाकाश), आचार, (पेशा या व्यवसाय), गुण, प्रवृत्ति, गमन, आज्ञा (प्रशासन) और मेषूरण(दशम भाव) आदि तथा उच्चस्थान-कर्मसंस्थान -कार्याभिरुचि-आचार-व्यवहार-गमन-गुण-राज्य-पूण्यकार्य-पिता-मुद्रा-भूषण-वस्त्र--निद्रा- राज्य, आकाशवृत्ति, विदेशवास, ऋण, कृषिकादि का विचार करना चाहिए।

**राज्यं चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा।**

**प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षयेत्।।**( बृ.पा,हो,12.10)

**व्यापारास्पदमानकर्मजयसत्कीर्ति क्रतुं जीवनं।**

**व्योमाचारगुणप्रवृत्तिगमनान्याज्ञां च च मेषूरणम्।**

जैसा कि जातकपारिजात में कहा गया है –

**आज्ञामानविभूषणानि वसनव्यापारनिद्राकृषि-**

**प्रवज्यागमकर्मजीवनयशोविज्ञानविद्याः क्रमात्।** (जा. पा.15.)

**5.11. एकादश भाव-** लाभ, आय, आगमन, आप्ति (प्राप्ति), सिद्धि, विभव (वैभव), प्राप्ति, भव, श्लाघ्यता, ज्येष्ठ भ्राता या भगिनी, वामकर्ण, सरस (रसमय पदार्थ), सन्तोष और शुभश्रवण, पाण्डित्य-वादविवाद- नाना प्रकार की वस्तुओं की उत्पत्ति का -पशुसमृद्ध्यादि का विचार करना आदि का विचार करना चाहिए।

**नानावस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च।**

**आयं वृद्धिं पशूनां च भवस्थान्निरीक्षणम्।** ।(बृ.पा,हो,12.10)

**लाभायागमनाप्तिसिद्धिविभवान् प्राप्तिं भवं श्लाघ्यतां**

**ज्येष्ठभ्रातरमन्यकर्णसरसान् सन्तोषमाकर्णनम् ॥15॥**

**5.12. द्वादशभाव-** दुःख, आंघ्रि (पैर), बाया नेत्र, क्षय (हानि), सूचक (संवादवाहक), अन्त्य, दरिद्रता, पापकर्म, शयन, व्यय, रिष्फ, गुप्तस्त्रीपुरुषसम्बन्ध और बन्धन आदि का विचार करना चाहिए।

**व्ययं च वैरिवृत्तान्तरिःफमन्त्यादिकं तथा।**

**व्ययाच्चैव हि ज्ञातव्यमिति सर्वत्र धीमता।।**( बृ.पा,हो,12.10)

**दुः खाङ्घ्रिवामनयनक्षयसूचकान्त्य दारिक्र्यपापशयनव्ययरिः फबन्धान् ।**

**भावाह्वया निगदिताः क्रमशोऽथ लीनस्थानं त्रिषड्व्ययपराभवराशिनाम ॥16॥**

**पापं व्ययश्च पतनं निरये वाममम्बकम्।**

**स्थानभ्रंशश्च वैकल्यं द्वादशेन विचिन्तयेत्।।**( प्रश्नमार्ग14.14)

प्रश्नशास्त्र के अनुसार प्रथम-चतुर्थ- सप्तम और दशमभाव के विषय में विशेष प्रसङ्ग प्राप्त होता है विषयानुसार चिन्तन करने में इसका भी अवश्य विचार करना चाहिए। लग्न से सञ्चार, चतुर्थ से शयन, सप्तम से उपवेशन एवं दशमभावात् स्थिति का चिन्तन करना चाहिए। जलविषयक प्रश्न हों तो केन्द्र से विचार करना चाहिए। चतुर्थभाव से स्थिर जल, सप्तम प्रवाहजल, दशम से वृष्टिजल और लग्न से इन जल सम्बन्धी सभी प्रश्नों का विचार करना चाहिए। यथा-

प्रश्नशास्त्र के अनुसार प्रथम-चतुर्थ- सप्तम और दशमभाव के विषय में विशेष प्रसङ्ग प्राप्त होता है विषयानुसार चिन्तन करने में इसका भी अवश्य विचार करना चाहिए। लग्न से सञ्चार, चतुर्थ से शयन, सप्तम से उपवेशन एवं दशमभावात् स्थिति का चिन्तन करना चाहिए। जलविषयक प्रश्न हों तो केन्द्र से विचार करना चाहिए। चतुर्थभाव से स्थिर जल, सप्तम प्रवाहजल, दशम से वृष्टिजल और लग्न से इन जल सम्बन्धी सभी प्रश्नों का विचार करना चाहिए। यथा-

**लग्नादिकेन्द्रैः क्रमणं शयनं चोपवेशकः।**

**स्थितिः स्थिरौघपतितवास्तुर्याद्यैश्च लग्नतः।।**( प्रश्नमार्ग4.20)

**यथा प्रश्नमार्ग –**

**चिन्त्यं चंक्रमणं लग्नाच्छयनं हि चतुर्थतः।**

**सप्तमेनोपवेशश्च चिन्त्या दशमतः स्थितिः ।**

**पृथुयशा ने षड्पञ्चाशिका में निर्देश दिया है कि लग्न से च्युति अर्थात् स्थान परिवर्तनादि, चतुर्थभाव से वृद्धि, सप्तमभाव से निवृति अर्थात् विदेश से प्रस्थानादि का फलादेश करना चाहिए।**

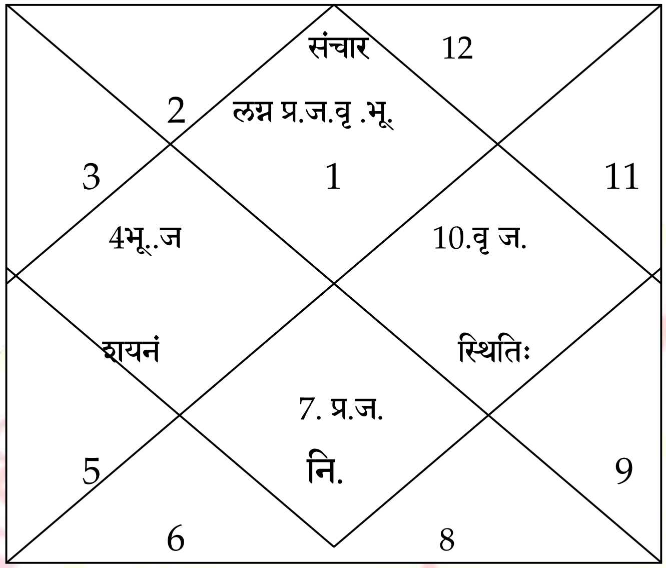


## 5.13. भावफल का विचार निर्णय –

**व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव**(ल..जा. 1.3) इति लघुजातक के अनुसार ज्योतिषशास्त्र रूपी दीपक से मानव के शुभाशुभ फल को समझ सकते हैं। शुभाशुभ फल का विचार करने के लिए भाव का विचार करना चाहिए और उस भाव को लग्न मान कर विचार करना चाहिए कि विचारणीय भाव से प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ पंचम, सप्तम, नवम, दशम,एकादश और द्वादश में उस विचारणीय भाव का स्वामी और शुभग्रह हैं या नहीं। यदि इन स्थानों में शुभग्रह हैं तो उस भाव की समृद्धि होगी अन्यता हानि। पुनः विचारणीय भाव से 1, २,4, 5, 7, 9, 1० पर पापग्रहों की दृष्टि तो नहीं हैं। यदि इन निद्दष्ट स्थानों में केवल शुभग्रह होंगे और विचारणीय भाव का स्वामी बली होगा तो पूर्ण शुभ फल, यदि इन स्थानों में पापग्रह हों तो अशुभ फल समझना चाहिए। यदि शुभग्रहों के साथ पापग्रह हों तो फलादेश के समय बलाबल का विचार करने के उपरान्त ही फल कथन करना चाहिए।

**सुर्यादात्मपितप्रभावनिरुजां शक्ति श्रियं चिन्तयेत्**

यदि कोई ग्रह दो राशियों का अधिपति हो तो ग्रह अपनी दोनों राशियों में से जो ओज् राशि है उसका पल पहले तथा दूसरी राशि का फल बाद में देता है। यदि ग्रह सम राशि में स्थित हो तो समराशि के स्वामित्य का फल पहले तदोपरान्त ओजराशि का फल देगा।

**चेतोबुद्धिनुपप्रसादजननीसंपत्करश्चन्द्रमा: ।**

**प्रजावित्तशरोरपुष्टितनयज्ञानानि वागीदवरात्**

**पत्नीवाहनभूषणानि मदनव्यापारसोख्यं भगो:।**

**आयुर्जोवनमृत्युकाररणविपद्भत्यांश्व मन्दाद्वदेत्**

**सर्पेशव पितामहं तु शिखिना मातामहं चिन्तयेत् ॥16॥ ॥**

सूर्य से आत्मा, पिता, प्रभाव, स्वास्थ्य, शक्ति (ताकत), और लक्ष्मी का विचार करना चाहिए। चन्द्रमा से मन, बुद्धि राजा की कृपा, माता और सम्पत्ति का विचार करें। मंगल से सत्व (ताकत, हिम्मत) रोग, गुण, छोट भाई, पृथ्वी, शत्रु और जाति (चचरे भाई आदि) का विचार करना चाहिए। विद्या, बन्धु, विवेक, मामा, मित्र, वाणी और कार्यक्षमता का विचार बुध से करें।

**5.14. कारकग्रह-** भाव, भावेश और कारक ग्रह की फल कथन में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका है। किन वस्तुओं का कौन सा ग्रह कारक होता है यह पिछले श्लोकों में बताया गया है। लग्नादि द्वादश भावों के लिए कारक ग्रहों की भी परिकल्पना की है और उनके अनुसार (1) सूर्य (2) बृहस्पति (3) मंगल (4) चन्द्र और बुध (5) बृहस्पति (6) मंगल और शनि (7) शुक्र (8) शनि (9) बृहस्पति और सूर्य (10) सूर्य, बुध, बृहस्पति और शनि (11) बृहस्पति (12) शनि क्रमशः तन्वादि बारह भावों के कारक हैं।

**इसे भी समझे-** किसी भी विषय का विचार करना हो तो भाव, भावेश और कारक तीनों का विचार अवश्य करना चाहिए क्योंकि ये बलवान् हो तो उस भाव का फल अवश्य देते हैं।

लग्न, घन, भाग्यादि भावों से विचारणीय विषयों का विचार चन्द्रमा से भी करना चाहिए। लग्न से तृतीय स्थान से विचारणीय विषयों का विचार, कुज से तृतीय स्थान से भी करना चाहिए। चतुर्थ भाव का विचार लग्न व चद्र लग्न से भी करना चाहिए। षष्ठभाव से विचारणीय रोग और शत्रु का विचार बुध से षष्ठ स्थान से भी करें। पुत्र का विचार गुरु से पञ्चम भाव, स्त्री का शुक्र से सप्तम भाव भाव से भी करना प्रशस्त है। जिस भाव से जो विषय विचारणीय है, अर्थात् विषय का उसके भावेश से भी विचार करना चाहिए।

जो भाव शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तथा अपने स्वामी से दृष्ट हों से उस भाव की वृद्धि होती है एवं जो भाव वृद्धा अवस्था में हो और न दृष्ट हो वह भाव निर्वल होता है।

**यो यो शुभैर्युतो दृष्टो भावो वा पतिदृष्टयुक्।**

**युवा प्रबुद्धो राज्यस्थः कुमारो वा अऽपि यत्पतिः।।**

**तदीक्षणवशात् तत्तद् भावसौख्यं वदेद् बुधः।**

**यद्यद् भावपतिर्नष्टास्त्रिकेशाद्यैश्च संयुतः।।**

**भावं न वीक्षते सम्यक् सुप्तो वृद्धो मतोऽथवा।**

**पीडितो वाऽस्य भावस्य फलं नष्टं वदेतं ध्रुवम्।।(बृ.पा,हो,14.16)**

**लघूत्तरीय प्रश्न-**

1. भाव कितने होते हैं? 12 **प्रकार के** ।

2. धन कि विचार किस भाव से करते है? **द्वितीयभाव**।

3. दक्षिण नेत्र का विचार किस भाव से करते हैं? **द्वितीयभाव**।

4.बड़े भाई का विचार किस भाव से करते हैं? **एकादश** (11)।

5. तनु प्रथमभाव का कारकग्रह है? **सूर्य** ।

**निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-**

5.............से वृष्टिजल का विचार करना चाहिए। **दशमभाव** ।

6..........से च्युति अर्थात् स्थान परिवर्तनादि का विचार करना चाहिए। **लग्न** ।

7.दशम से.......................... का विचार करना चाहिए। **व्यापार व आजीविका** ।

**बोध प्रश्न-**

7. प्रथमभाव ( तनुभाव) से क्या- क्या विचार करते हैं?
8. उत्तर भारत- दक्षिण भारत में माता और पिता का विचार किस भाव से तथा कैसे करते हैं उदाहरण सहित लिखिए?
9. वाहन विचार का वर्णन कीजिए?

10. भावफल की सिद्धि कब होती है?

11. जातक की भार्या तथा उसके सौभाग्य को भाव सहित स्पष्ट कीजिए।

# इकाईः 6 राजयोग

आकाश में स्थित ग्रहों की स्थिति के आधार पर जन्मकुण्डली का निर्माण कर तथा उनमें ग्रहों को आकाशीय स्थिति के अनुसार स्थापित कर फलादेश किया जाता है। कुण्डली में बारह भाव होते हैं। जातक की जन्मकुण्डली में विद्यमान द्वादश भावों में स्थित ग्रह स्थितियों के आधार पर ही उसके भूत-वर्तमान और भविष्य में होने वाली घटनाओं का फलादेश किया जाता है। उन ग्रह स्थितियों के कारण ही जातक के जन्म समय की ग्रह स्थितियों के तथा गोचर के अनुसार अनेकानेक योग बनते हैं। इन योगों के द्वारा जातक के स्वरूप- बुद्धि-स्वभाव-साहस-भाग्योदयादि का विचार किया जाता है। सूर्यादि ग्रह स्वराशि- उच्चराशि-केन्द्र-त्रिकोण में हों तो अपनी दशा या अन्तर्दशा में विशेष योग बनाकर शुभ फल अवश्य देते हैं।

6.1 **पञ्चमहापुरुष योग-** उच्चराशि या स्वराशि के होकर मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र एवं शनि यदि केन्द्र (1, 4, 7, 10 वें) भावों में स्थित हों तो क्रमशः रुचक, भद्र, हंस, मालव और शश योग बनते हैं।

6.2 **रुचक योग-** मेष, वृश्चिक या मकर राशि का मङ्गल यदि केन्द्र-लग्न, चतुर्थ, सप्तम या दशम भाव में स्थित हो तो रुचक योग होता है।

| 12 | 1 | 2 | 3 |
| --- | --- | --- | --- |
| 11 | रुचक योग | | 4 |
| 10<br>मंगल | | | 5 |
| 9 | 8 | 7 | 6 |

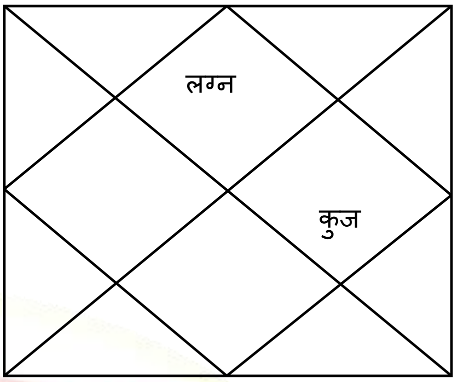


**6.3 भद्र योग-** मिथुन या कन्या राशिगत बुध यदि केन्द्रस्थ हो तो भद्र योग बनता है।

**6.4 हंस योग-** यदि कर्क, धनु या मीन राशि का बृहस्पति केन्द्रस्थ हो तो हंस योग बनता है।

**6.5.मालव योग-** यदि वृष, तुला या मीन राशि का शुक्र केन्द्र में स्थित हो तो मालव योग होता है।

**6.6.शश योग-** यदि तुला, मकर एवं कुम्भ राशिस्थ शनि केन्द्र में स्थित हो तो शश योग होता है। जैसा कि श्री **मन्त्रेश्वर ने फलदीपिका** में वर्णन किया है-

**रुचकभद्रकहंसकमालवाः**

**सशशका इति पञ्च च कीर्तिताः ।**

**स्वभवनोच्चगतेषु चतुष्टये**

**क्षितिसुतादिषु तान् क्रमशो वदेत् ॥1॥**

**जातकपारिजातकार श्री वैद्यनाथ** के अनुसार- भौमादि पञ्च ग्रहों के उच्चराशि, मूलत्रिकोण या स्वराशिस्थ होकर केन्द्रगत होने से भी पञ्चमहापुरुष योग बनते हैं।

**मूलत्रिकोणनिजतुङ्गगृहोपयाता भौमज्ञजीवसितभानुसुता बलिष्ठाः।**

**केन्द्रस्थिता यदि तथा रुचकभद्रहंससमालव्यचारुशशयोगकरा भवन्ति॥**

**6.1 . रुचक योग के फल-** रुचक योग में उत्पन्न होनेवाला व्यक्ति दीर्घायु, लम्बे मुखमण्डल वाला होता है तथा वह साहसिक कार्यों से अर्जित धन का स्वामी, शूरवीर, शत्रुओं का विनाश करने वाला, गर्व से युक्त शक्तिशाली, सद्गुणों से विख्यात, सेनापति और विजयी होता है।

**दीर्घास्यो बहुसाहसाप्तविभवः शूरोऽरिहन्ता बली।**

**गर्विष्ठो रुचके प्रतीतगुणवान् सेनापतिर्जित्वरः।**

**6.2. भद्र योग के फल**- भद्र योगोत्पन्न जातक दीर्घायु, कुशल बुद्धिमान् , निर्मल आचारवान्, विद्वानों से प्रशंसित तथा बहुत ही वैभव-सम्पन्न राजा होता है।

**आयुष्मान् सकुशाग्रबुद्धिरमलो विद्वज्जनश्लाधितो**

**भूपो भद्रकयोगजोऽतिविभवश्चास्थानकोलाहलः ॥२॥**

**6.3. हंस योग फल**- हंस योग में जन्म लेने वाला मनुष्य सज्जनों से प्रशंसित राजा होता है। उसके हाथ और पैरों में शङ्ख, कमल, मत्स्य और अङ्कुश के चिह्न होते हैं। वह सुन्दर शरीरवाला मिष्टान्न भोजी तथा धार्मिक होता है ।

**हंसे सद्भिरभिष्टुतः क्षितिपतिः शङ्खाब्जमत्स्याङ्कुशै -**

**श्चिह्नैः पादकराङ्कितः शुभवपुर्मृष्टान्नभुग्धार्मिकः ।**

**6.4.मालव्य योग फल**- मालव्य योग में जन्म लेनेवाला पुष्ट शरीरवाला, दृढनिश्चयी, धनवान्, स्त्री-पुत्रादि और सौभाग्य से सम्पन्न, वैभवादि से युक्त, सुस्वादु भोजनादि का सुख प्राप्त करनेवाला, अनेक वाहनादि से युक्त, यशस्वी, विद्वान् और प्रसन्नचित्त व्यक्ति होता है।

**पुष्टाङ्गो धृतिमान्धनी सुतवधूभाग्यान्वितो वर्धनो**

**मालव्ये सुखभुक्सुवाहनयशा विद्वान्प्रसन्नेन्द्रियः ॥३॥**

**6.5.शश योग लक्षण** -शशयोगोत्पन्न जातक सभी लोगों के द्वारा प्रशंसित, अच्छे सेवकोंवाला, ग्रामप्रमुख या राजा, कुटिल प्रवृत्ति से युक्त, दूसरों के वित्त और स्त्रियों का भोग करने वाला, सौभाग्य सम्पन्न होता है।

**शस्तः सर्वजनैः सुभृत्यबलवान् ग्रामाधिपो वा नृपो**

**दुर्वृत्तः शशयोगजोऽन्यवनितावित्तान्वितः सौख्यवान् ।**

उपर्युक्त रुचक, भद्र, हंसादि जो पाँच योग लग्न से दर्शाए गये हैं तथा यह चन्द्र लग्न से भी होते हैं। ये योग साम्राज्य और सिद्धियों को प्रदान करनेवाले होते हैं। यदि इनमें से एक भी योग जन्माङ्ग में हो तो जातक भाग्यवान्, इनमें से दो योग उपस्थित हों तो जातक राजा के समान वैभवादि से सम्पन्न, इनमें से यदि तीन योग हों तो जातक राजा, चार योग हों तो सम्राट् एवं यदि जन्माङ्ग में ये सभी योग हों तो इनयोगों में जन्म लेनेवाला मनुष्य समस्त भूमण्डल का स्वामी होता है।

**लग्नेन्द्वोरपि योगपञ्चकमिदं साम्राज्यसिद्धिप्रदं**

**तेष्वेकादिषु भाग्यवान् नृपसमो राजा नृपेन्द्रोऽधिकः ॥4॥**

**चन्द्राधियोग –**

**6.6.सुनफा योग-** चन्द्र स्थित भाव से द्वितीय भाव में सूर्य को छोड़कर यदि पञ्चतारा भौमादि ( भौम-बुध-बृहस्पति-शुक्र-और शनि) ग्रह स्थित हों तो सुनफा योग होता है।

**6.7.अनफा योग-** चन्द्र स्थित भाव से द्वादश भाव में सूर्य को छोड़कर यदि पञ्चतारा भौमादि ( भौम-बुध-बृहस्पति-शुक्र-और शनि) ग्रह स्थित हों तो अनफा योग।

**6.8. दुरधुरा योग-** चन्द्र स्थित भाव से द्वितीय और द्वादश दोनों भावों में सूर्य को छोड़कर यदि पञ्चतारा भौमादि ( भौम-बुध-बृहस्पति-शुक्र-और शनि) ग्रह स्थित हों तो दुरुधुरा योग बनता होता है।

**6.9. केमद्रुम योग-** इन तीनों योगों के अनुपस्थित रहने पर अर्थात् चन्द्रमा स्थित भाव से द्वितीय एवं द्वादश भाव ग्रहरहित हों तो केमद्रुम योग होता है। कुछ विद्वानों के अनुसार चन्द्रमा के साथ या उससे केन्द्र में यदि कोई ग्रह संयुक्त हो तो केमद्रुम योग नहीं होता।

**विधोस्तु सुनफानफाधुरुधुराः स्वरिःफोभय-**

**स्थितैर्विरविभिर्ग्रहैरितरथा तु केमद्रुमः।**

**हिमत्विषि चतुष्टये ग्रहयुतेऽथ केमद्रुमो**

**न हीति कथितोऽथवा हिमकराद्ग्रहैः केन्द्रगैः ॥5॥**

**सुनफा योग के फल-** सुनफा योगोत्पन्न व्यक्ति अपने पुरुषार्थ से अर्जित धन-वैभव और बुद्धि से युक्त राजा या राजा के समान ख्यातीवाला होता है।

**स्वयमधिगतवित्तः पार्थिवस्तत्समो वा**

**भवति हि सुनफायां धीधनख्यातिमांश्च।**

**अनफा योग के फल-** अनफा योगोत्पन्न जातक शक्तिमान, स्वस्थ, शीलवान्, कीर्ति परचम फहरानेवाला, भौतिक सुखों को भोगनेवाला, सुवेषधारी, आत्मसन्तुष्ट और प्रसन्नचित्त होता है।

**प्रभुरगदशरीरः शीलवान् ख्यातकीर्ति-**

**विषयसुखसुवेषो निर्वृतश्चानफायाम् ॥6॥**

**दुरुधरा योग के फल-** दुरुधरा योगोत्पन्न व्यक्ति भोग, सुख, भाग्यवान् वाहनादि के सुख को प्राप्त करनेवाला, त्यागी एवं अच्छे नौकरों से युक्त होता है।

**उत्पन्नभोगसुखभाग्धनवाहनढ्य-**

**स्त्यागान्वितो धुरुधुराप्रभवः सभृत्यः।**

**केमद्रुम योग के फल-** केमद्रुम योगोत्पन्न जातक राजकुलोत्पन्न में उत्पन्न होने पर भी व्यक्ति मलिनचित्तवृत्तिवाला, दुःखी, नीच, निर्धन, भृत्य और दुष्ट होता है।

**केमुद्रमे मालिन्दुःखितनीचनिःस्वाः**

**प्रेष्याः खलाश्च नृपतेरपि वंशजाता।।7।।**

**सूर्याधियोग-**

6.10.**वेसि योग-** सूर्याधितिष्ठित राशि से द्वितीय भाव में यदि शुभग्रह (बुध, बृहस्पति और शुक्र) स्थित हों तो शुभ वेसि योग।

6.11. **शुभ वासि योग-** सूर्याधितिष्ठित राशि से द्वादश भाव में शुभग्रह हों तो शुभ वासि योग।

6.12. **शुभ उभयचरी-** सूर्याधितिष्ठित राशि से द्विद्वादश दोनों भावों शुभग्रह स्थित हों तो शुभ उभयचरी योग बनता है।

6.13. **अशुभ वेसि-** सूर्याधितिष्ठित राशि से द्वितीय भाव में यदि पापग्रह (मंगल या शनि) हों तो अशुभ वेसि योग।

6.14. **पाप वासि** - सूर्याधितिष्ठित राशि से द्वादश भाव में पापग्रह हों तो पाप वासि योग बनता है।

6.15.**अशुभ उभयचरी योग-** सूर्याधितिष्ठित राशि से यदि द्विद्वादश दोनों भावों में पापग्रह हों तो अशुभ उभयचरी योग बनते हैं।

6.16. **कर्तरियोग-** लग्न से द्वितीय और द्वादश दोनों भावों में यदि शुभग्रह स्थित हों तो शुभ कर्तरि योग और उन स्थानों में पापग्रह स्थित हों तो पाप कर्तरि योग बनता है।

6.17. **सुशुभ योग-** लग्न से द्वितीय भाव में यदि पापग्रहों से अदृष्ट शुभग्रह स्थित हों तो इस योग को सुशुभ योग कहते हैं।

**हित्वेन्दुं शुभवेसिवास्युभयचर्याख्याः स्वरिः फोभय-**

**स्थानस्थैः सवितुः शुभैः स्युरशुभैस्ते पापसंज्ञाः स्मृताः।**

**सत्पार्श्वे शुभकर्तरीत्युदयभे पापैस्तु पापाह्वयो**

**लग्नाद्वित्तगतैः शुभैस्तु सुशुभो योगो न पापेक्षितैः ॥8॥**

**वेसि- वासि- कर्तरि तथा उभयचरी योग के लक्षण-** शुभवेसि योगोत्पन्न जातक भाग्यवान्, सुखी, गुणवान्, धैर्यवान्, धार्मिक राजा होता।

**जातः स्यात् सुभगः सुखी गुणनिधिर्धीरो नृपो धार्मिको**

**शुभवासि योग-** योगोत्पन्न जातक विख्यात, सभी का प्रिय, अत्यन्त भाग्यवान्, दानवीर तथा राजा का प्रिय होता है।

**विख्यातः सकलप्रियोऽतिसुभगो दाता महीशप्रियः ।**

**शुभ उभयचरी योग** – इस योगोत्पन्न जातक सुन्दर अङ्गोंवाला, वह प्रियवाणी बोलनेवाला, सांसारिक प्रपञ्च में रुचि रखने वाला, वाचाल, यशस्वी, विद्वान् और धन से सम्पन्न होता है।

**चार्वङ्गः प्रियवाक्प्रपञ्चरसिको वाग्मी यशस्वी धनी**

**विद्यादत्र सुवेसिवास्युभयचर्याख्येषु पादक्रमात् ॥9॥**

**पाप वेसि योग के लक्षण-** पाप वेसि योग में जन्म लेनेवाला जातक अन्यायी दूसरों का निन्दक, दुष्ट लोगों का का प्रिय और दुर्जन होता है।

**पाप वासि-** अशुभवासि योग में उत्पन्न जातक मायावी, दूसरों का निन्दक, दुष्टो का मित्र, दुर्वृत्ति से युक्त तथा शास्त्रों का ज्ञाता होता है।

**अशुभ उभयचरी-** अशुभोभयचरी योग में उत्पन्न व्यक्ति लोक में अपकीर्ति वाला, खिन्न मनवाला, विद्या और धन से हीन एवं भाग्यहीन होता है।

**स्यादपकीर्तिदुःखितमना विद्यार्थभाग्यैश्च्युतो**

**जातश्चाशुभवेसिवास्युभयचर्याख्येषु पादक्रमात् ॥1०॥**

**शुभ एवं अशुभ कर्तरी योग लक्षण-**

**जैवातृको विभयरोगरिपुः सुखी स्या-**

**दाढ्यः श्रिया च शुभकर्तरियोगजातः।**

**निःस्वोऽशुचिर्विसुखदारसुतोऽङ्गहीनः**

**स्यात्पापकर्तरिभवोऽचिरमायुरेति ॥11॥**

**शुभकर्तरी योग के फल-** इस योग में उत्पन्न जातक निर्भय, निरोग, शत्रुओं से हीन, सुखी, धन वैभवादि से सम्पन्न एवं दीर्घायु होता है।

**पापकर्तरी योग के फल**- इस योग में उत्पन्न व्यक्ति निर्धन, मलिन, दुःखी, स्त्री और पुत्रादि से रहित तथा अङ्गहीन होता है।

**6.18. अमला योग**- जन्मलग्न या चन्द्रलग्न से दशम भाव में यदि शुभग्रह (बृहस्पति, बुध और शुक्र) हों तो अमला योग होता है।

**अमला योग के फल**- अमला योग में जन्म लेनेवाला जातक आचारवान्, धार्मिक वृत्तिवाला, प्रसन्नचित्त, सौभाग्यशाली, राजा के द्वारा मान-प्रतिष्ठा प्राप्त करनेवाला, मृदुस्वभाव से युक्त मृदुभाषी और धनवान् होता है। यथा-

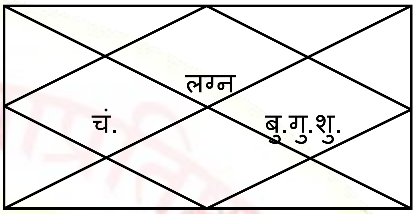


**लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा दशमे शुभसंयुते।**

**योगोऽयममला नाम कीर्तिराचन्द्रतारकौ।।**

**राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रियः।**

**परोपकारी गुणवान् अमलायोगसम्भवः।। (जातकपारिजात)**

**आचारवान् धर्ममतिः प्रसन्नः सौभाग्यवान् पार्थिवमाननीयः।**

**मृदुस्वभावः स्मितभाषणश्च धनी भवेच्चामलयोगजातः॥१२॥**

**चन्द्र- सूर्य योगों के फलों में समानता**

**सुशुभे शुभकर्तर्यां वेस्यादौ सुनभादिवत्।**

**शुभैः क्रमात्फलं ज्ञेयं विपरीतमसद्ग्रहैः ॥१३॥**

सुशुभ, शुभकर्तरी, शुभवेसि आदि योगों के फल सुनफादि योगों के समान होते हैं तथा अशुभ, पाप कर्तरी और पापवेसि आदि पापग्रहों के योग से उत्पन्न योगों के फल उनके विपरीत होते हैं।

**6.19.महाभाग्य योग**- दिवाजन्म हो और पुरुष के जन्माङ्ग में यदि लग्न, सूर्य और चन्द्रमा तीनों विषम राशि के हों, रात्रिजन्म हो और स्त्री के जन्माङ्ग में लग्न, सूर्य एवं चन्द्रमा सम राशि के हों तो महाभाग्य योग होता है। जैसा कि मन्त्रेश्वर ने कहा है कि-

**ओजेष्वर्केन्दुलग्नान्यजनि दिवि पुमांश्चेन्महाभाग्ययोगः**

**स्त्रीणान्तद्व्यत्ययेस्याच्छशिनि सुरगुरोः केन्द्रगे केसरीति।**

**जीवान्त्याष्टारिसंस्थे शशिनि सुरगुरोः केन्द्रगे नास्ति लग्ना-**

**चन्द्रे केन्द्रादिगेऽकार्दिधमसमवरिष्ठाख्ययोगाः प्रसिद्धाः।।**

**6.20. केसरीयोग(गजकेशरी)-** जन्मांग में यदि बृहस्पति अधिष्ठित राशि से केन्द्र (लग्न, चतुर्थ, सप्तम व दशम) में चन्द्रमा स्थित हो तो केसरी योग होता है।

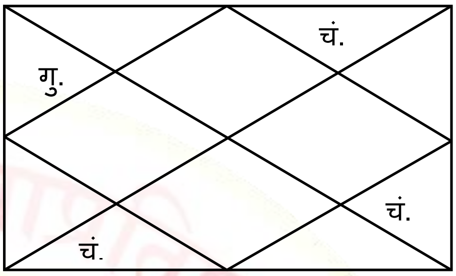


**केसरी योगफल-**

**केसरीव रिपुवर्गनिहन्ता प्रौढवाक् सदसि राजसवृत्तिः ।**

**दीर्घजीव्यतियशाः पटुबुद्धिस्तेजसा जयति केसरियोगे ॥**

**केसरी** - इस योग में उत्पन्न जातक सिंह के सदृश अपने शत्रुओं का नाश करने वाला होता है। वह गम्भीर वा गर्वोक्त वक्ता, राजस वृत्तिसम्पन्न, दीर्घजीवी और महान् यशस्वी होता है। अपनी बुद्धि- कौशल और तेजस्विता के बल पर जय प्राप्त करता है।

**श्रीवैद्यनाथ के अनुसार गजकेसरी योग-**

बृहस्पति और चन्द्रमा के परस्पर केन्द्र में स्थित होने से, बुध, बृहस्पति और शुक्र यदि अपनी नीच राशि में नहीं हों तथा अस्त न हों और उनसे चन्द्रमा देखा जाता हो तो दोनों स्थितियों में गजकेसरी योग होता है। यथा-

**केन्द्रस्थिते देवगुरौ मृगाङ्काद्योगस्तदाहुर्गजकेसरीति ।**

**दृष्टे सितार्येन्दुसुतैः शशाङ्के नीचास्तहीनैर्गजकेसरी स्यात् ॥**

**गजकेसरिसञ्जातस्तेजस्वी धनधान्यवान् ।**

**मेधावी गुणसम्पन्नो राजप्रियकरो भवेत्' ॥ (जातकपारिजात)**

**6.21. शकट योग-** चन्द्रमा से (6, 8, 12 वें) स्थान में यदि बृहस्पति स्थित हो तो शकट योग होता है लेकिन चन्द्रमा लग्न से केन्द्रगत हो तो शकट योग भङ्ग हो जाता है।

**6.22. अधम योग-** सूर्याधितिष्ठित राशि से केन्द्र (1, 4, 7, 10 वें) भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो अधम योग होता है।

**6.23.सम योग-** यदि सूर्य से पणफर (2, 5, 8,11वें) भावों में चन्द्रमा स्थित हो तो सम योग होता है।

**वरिष्ठ योग-** यदि सूर्य से आपोक्लिम (3, 6, 9, 12 वें) भावों में चन्द्रमा स्थित हो तो वरिष्ठ योग होता है।यथा-

**ओजेष्वर्केन्दुलग्नान्यजनि दिवि पुमांश्चेन्महाभाग्ययोगः**

**सत्रीणान्तद्व्यत्यये स्याच्छशिनि सुरगुरोः केन्द्रगे केसरीति।**

**जीवान्त्याष्टारिसंस्थे शशिनि तु शकटः केन्द्रगे नास्ति**

**लग्ना-चन्द्र केन्द्रादिगेऽर्कादधमसमवरिष्ठाख्ययोगाः प्रसिद्धाः ॥**

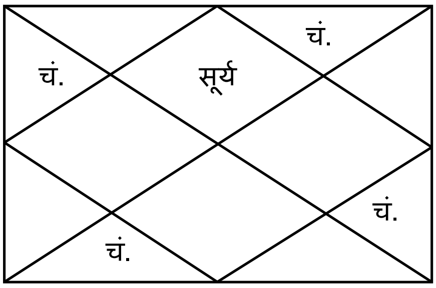


**6.24. सरस्वती योग**- यदि लग्न से बुध, बृहस्पति और शुक्र केन्द्र (1, 4, 7,10) या त्रिकोण (5,9) भावों में अथवा द्वितीय भाव में स्थित हों और इनमें से बृहस्पति अपनी स्वोच्च राशि एवं स्वराशि अथवा मित्र सूर्य, कुज या चन्द्रमा राशि में हो तथा बलवान् हो तो सरस्वती योग होता है।

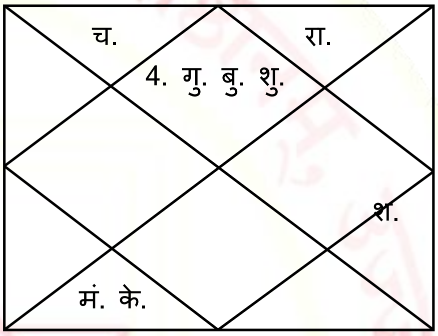


**शुक्रवाक्पतिसुधाकरात्मजैः केन्द्रकोणसहितेर्द्वितीयगैः ।**

**स्वोच्चमित्रभवनेषु वाक्पतौ वीर्यगे सति सरस्वतीरिता ॥**

**सरस्वती योगफल**- सरस्वती योग में उत्पन्न जातक अति बुद्धिशाली; नाट्य, गद्य-पद्य, गणित, अलङ्कार आदि अनेक शास्त्रों में निष्णात, काव्य एवं प्रबन्ध शास्त्रों के रहस्य को उद्घाटित करने वाला, त्रैलोक्य में अपनी कीर्ति की पताका फहराने वाला, धनवान्, स्त्री और पुत्रादि से युक्त, श्रेष्ठ राजाओं के द्वारा सम्पूजित भाग्यवान् होता है।

**धीमन्नाटकगद्यपद्यगणनालङ्कारशास्त्रेष्वयं**

**निष्णातः कविताप्रबन्धरचनाशास्त्रार्थपारङ्गतः ।**

**कीर्त्याक्रान्तजगत्त्रयोऽतिधनिको दारात्मजैरन्वितः**

**स्यात् सारस्वतयोगजो नृपवरैः सम्पूजितो भाग्यवान् ॥२७॥**

इस इकाई में लग्न- सूर्य- चन्द्र- बृहस्पति आदि ग्रहों से अनेक योगों का वर्णन किया गया है। ये योग तत्काल फलादेश करने में सहायक होंगे। जिस किसी भी कुण्डली का विचार करना हो उस कुण्डली के प्रत्येक भावों का पूर्ण विचार करना चाहिए। राशि का स्वामी किस राशि में है, किस ग्रह के साथ युति कर रहा है, उस पर किस ग्रह की दृष्टि है, दृष्टि है तो शुभ ग्रहों की है या पाप ग्रहों की एवं वह बलवान् है या फिर निर्बल देश- समय के अनुसार चिन्तन करकर लग्न-चन्द्र एवं सूर्यादि से योगों का विचार करते हुए इन सभी योगों का फलादेश करना चाहिए।

**लघूत्तरीय प्रश्न-**

1. मेष, वृश्चिक या मकर राशि का मङ्गल यदि केन्द्र-लग्न, चतुर्थ, सप्तम या दशम भाव में स्थित हो तो कौनसा योग होता है? **रुचक योग**।

2. यदि सूर्य से आपोक्लिम भावों में चन्द्रमा स्थित हो तो कौनसा योग होता है? **वरिष्ठ योग** ।

3. चन्द्रमा बृहस्पति से केन्द्र में हो तो कौनसा योग होता है? **केसरी( गजकेशरी)**।

4. किस योग का विचार चन्द्र राशि से किया जाता है? **सुनफादि योगों का**।

5. किस योग का विचार सूर्य राशि से किया जाता है? **वेसी, वासि आदि योगों का** ।

**निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-**

**5.** ........ से द्वितीय एवं द्वादश में कोई ग्रह नहीं हो तो केमुद्रम योग होता है। **चन्द्रमा**।

**6.** चन्द्रमा लग्न से केन्द्र में हो तो कौनसा योग भङ्ग हो जाता है। **शकटयोग**।

**7.** सूर्य से ...............शुभग्रह हों तो शुभवेसी योग बनता है।**द्वितीयभाव ।**

**8.** यदि सूर्य से केन्द्र में............. हो तो अधम योग होता है। **अधमयोग**।

**बोध प्रश्न-**

12.हंसयोग कैसे बनता है तथा इसके होने पर जातक कैसा होता है वर्णन कीजिए?

13. सरस्वती योग का वर्णन कीजिए?

14. अमलायोग का फल सहित वर्णन कीजिए?

15. पुरुष और स्त्री की कुण्डली निर्माण करते हुए महाभाग्य योग का वर्णन कीजिए।

16.कुण्डली निर्माण करते हुए अनफा योग का वर्णन कीजिए?

17.कुण्डली निर्माण करते हुए गजकेशरी योग का वर्णन कीजिए।

# इकाईः7 आयुर्विज्ञान

"**शरीरं व्याधिमन्दिरम्**" , शास्त्रवचन के अनुसार वात-पित्त-कफादि के कारण जायमान रोग तथा उनके उपायों का विवेचन ऋग्वेद, अथर्ववेद, चरकसंहिता, अष्टांग हृदय एवं सुश्रुतसंहिता में उपलब्ध हैं लेकिन ये सभी रोग सूर्यचन्द्रादि नौ ग्रहों, अश्विन्यादि सत्ताईस नक्षत्रों के प्रभाव से उत्पन्न होते हैं और इनके प्रभाव से जातक उनके कारकों के अनुसार रुग्ण करते हैं क्योंकि सूर्यादि ग्रह पञ्चभूत- अस्थ्यों के धातु- रस- वात-पित्त-कफादि के कारकों का होराशास्त्र में लोकोपकारक भौतिकतत्त्व दर्शन है। ज्योतिषशास्त्र के द्वारा हम ज्ञात कर सकते हैं कि कौन? कब? किस रोग से पीडित होगा?

जिस प्रकार द्वादश भावों द्वारा ही जातक के जीवन की तथा विश्व की तात्कालिक घटनाओं का ज्ञान करते हैं। इसी प्रकार हम रोगों का विचार करे तो रोगभाव (षष्ठ भाव) में स्थित ग्रह से, अष्टम और द्वादश भावस्थ ग्रह से एवं षष्ठेश और षष्ठेश से संयुक्त ग्रहों से करना चाहिए। दो अथवा तीन प्रकार से यदि एक ही रोग निर्दिष्ट हो तो वह रोग कहना चाहिए।

**रोगस्य चिन्तामपि रोगभावस्थितैर्ग्रहैर्वा व्ययमृत्युसंस्थैः ।**

**रोगेश्वरेणापि तदन्वितैर्वा द्वित्यादिसंवादवशाद्वदन्तु ॥१॥**

## 7.1. सामान्य आयुर्विचार –

**आयुश्च लोकयात्रा च शास्त्रेऽस्मिन् द्वे प्रयोजने**(प्र.मा.9.15) इस पंक्ति से ज्योतिषशास्त्र का प्रयोजन स्पष्ट होता है। अर्थात् आयुर्विचार और लोकयात्रा। लोकयात्रा इत्युक्ते मानव जीवन की गतागत घटनाओं का फल निरूपण का वर्णन है। यद्यपि प्रयोजन दो बताए गए है फिर भी आयु को इस शास्त्र में प्राथमिकता दी गई है। जैसा कि प्रश्नमार्गकार ने कहा है कि – **अनायुषां तु मर्त्यानां लक्षणैः किं प्रयोजनम्**(प्र.मा.9.3) ।

वस्तुतः मानवजीवन तो आयु पर ही निर्भर है क्योंकि जातक भाग्यान् राजयोगादि से युक्त हो लेकिन उसकी आयु अल्पायु हो तो उसके राजयोगादि का कोई प्रयोजन नहीं है।

**आयुर्हिने तु नराणां लक्षणैः किं प्रयोजनम्,**

**अपाश्यमरणं जीवं प्रपश्यन्ति शुभाशुभम्।**

**मरिष्यति यदा दैवात्कोभुङ्क्ते तच्छुभाशुभम्।।**

फलदीपिकाकार मन्त्रेश्वर ने कहा कि-

**जाते कुमारे सति पूर्वमार्यैरायुर्विचिन्त्यं हि ततः फलानि।**

**विचारणीया गुणिनि स्थिते तद् गुणाः समस्ताः खलु लक्षणज्ञैः ॥1॥**

अर्थात् जातक का आयुर्विचार अवश्य करना चाहिए। आयुविचार कब करना चाहिए इसका भी स्पष्ट निर्देश है कि जन्माङ्ग में आयुष्य-विचार को सर्वाधिक वरीयता देनी चाहिए क्योंकि आयुष्य के बिना राजयोगादि समस्त फल व्यर्थ हो जाते हैं। श्रीकल्याण वर्मा ने भी कहा है कि-

**आयुर्ज्ञानाभावे सर्व विफलं प्रकीर्तितं यस्मात्।**

**आद्वादशाद्वान्नरयोनिजन्मनामायुष्कला निश्चयितुं न शक्यते।**

**माता च पित्रा कृतपापकर्मणा बालग्रहैर्नाशमुपैति बालकः ।।**

इससे सपष्ट होता है कि मातापिता के पापकर्म के कारण भी बालक की मृत्यु हो सकती है।

**आद्ये चतुष्के जननीकृताद्यै र्मध्ये च पित्रार्जितपापसङ्घैः।**

**बालस्तदन्त्यासु चतुः शरत्सु स्वकीयदोषैः समुपैति नाशम्।।**(फ.दी.1३.4)

### 7.2. आयु के भेद-

ज्योतिषशास्त्र में प्रमुखतः आयु तीन प्रकार की होती है। यथा अल्पायु- मध्यायु और दीर्घायु।

**अष्टौ बालारिष्टमादौ नराणां योगारिष्टं प्राहुराविंशतिः स्यात्**

**अल्पं चाद्वात्रिंशतं मध्यमायुश्चासप्तत्याः पूर्णमायुः शतान्तम् ॥6॥**

जन्मकाल से आठ वर्ष पर्यन्त बालारिष्ट, नवें वर्ष से बीस वर्ष पर्यन्त योगारिष्ट होता है। बत्तीस वर्ष तक अल्पायु, सत्तर वर्ष तक मध्यायु और इकहत्तरवे वर्ष से सौ वर्ष तक पूर्णायु होती है। विविधाचार्यों के अनुसार-

| | | | |
|---|---|---|---|
| अल्पायु | 32 | 36 | 40 |
| मध्यायु | 65 | 71 | 80 |
| दीर्घायु | 96 | 108 | 120 |

अतः चिन्तन करते हुए उसके कारण यानि सामान्य कष्टप्रदायक रोगों, शापादि रोगों एवं मृत्यु प्रदायक रोगों का का भी विचार अवश्य करना चाहिए। यदि सूर्यादि ग्रहाः लग्न से अष्टम में हों तो क्रमशः -

| लग्नाद अष्टमस्थ ग्रह | मृत्यु का कारण |
|---|---|
| सूर्य | अग्नि सम्बन्धित |
| चन्द्र | जल से |
| भौम | शस्त्र से |
| बुध | ज्वर से |
| गुरु | अज्ञात रोग से |
| शुक्र | प्रमेहजनितरोग से |
| शनि | क्षुदाजन्य रोग से |

उपर्युक्त चक्र में किस ग्रह के द्वारा कौनसा रोग होता है स्पष्ट रूप वर्णन है।

### 7.3. लग्नादि भावों में रोग विचार-

कुण्डली में लग्नादि बारह भावों के द्वारा मनुष्य के जीवन में आने वाली प्रत्येक घटना का पूर्वानुमान किया जा सकता है-

**प्रथमभाव-** इस भाव से सिर दर्द, मानसिक रोग, नजला एवं शारीरिक तथा मानसिक क्षमता का विचार किया जाता है।

**द्वितीयभाव-** इस भाव से मृत्यु का विचार किया जाता है और नेत्र रोग, कर्ण रोग, मुख रोग, नासा रोग, दाँतों के रोग तथा गले की बीमारी का विचार किया जाता है।

**तृतीयभाव-** इस भाव से कण्ठ,गले की खराबी, गण्डमाला, श्वास, खाँसी, दमा, फेफड़े के रोग तथा हाथ में होने वाले विकारों का विचार किया जाता है।

**चतुर्थभाव-** इस भाव से हृदय एवं पसलियाँ, पागलपन एवं अन्य मानसिक विकारों में भी विचार किया जाता है।

**पञ्चमभाव-** इस भाव से पेट के रोग, मन्दाग्नि, अरुचि, पित्तरोग, जिगर, तिल्ली एव गुर्दे के रोगों का विचार किया जाता है।

**षष्ठभाव**- इस भाव से कमर का दर्द, एपेन्डिक्स, आँतों की बीमारी, हानिया तथा अश्मरी का विचार किया जाता है।

**सप्तमभाव**- इस भाव से प्रमेह, मधुमेह, प्रदर, उपदंश, पथरी, गर्भाशय के रोग तथा बस्ति में होने वाले रोगों का विचार करते हैं।

**अष्टमभाव**- इस भाव से गुप्त रोग, वीर्य-विकार, अर्श, भगंदर, उपदंश, संसर्गजन्य रोग, मूत्र रोग आदि का विचार किया जाता है।

**नवमभाव-** इस भाव से स्त्रियों के मासिक धर्म सम्बन्धी रोग, यकृत दोष, रक्त विकार, वायु विकार, कुल्हे का दर्द तथा मज्जा रोगों का विचार करते हैं।

**दशमभाव-** इस भाव से गठिया दर्द, कम्पवात, चर्मरोग, घुटने का दर्द तथा अन्य वायु रोगों का विचार किया जाता है।

**एकादश भाव-** इस भाव से पैर में चोट लगना, पैर की हड्डी टूटना, पिंडलियों में दर्द, शीत विकार एवं रक्त विकार का विचार किया जाता है।

**द्वादश भाव-** इस भाव से अलर्जी, कमजोरी, नेत्रविकार, पोलियो और रोगप्रतिरोधक क्षमता की कमी का विचार किया जाता है।

जातकपारिजात के अनुसार लग्नादि द्वादश भाव और मेषादि द्वादश राशियाँ निम्नलिखित कारणों से रोग-कारक बन जाती हैं-

- ○ पाप ग्रहों के मध्य में स्थिति।
- ○ पापग्रहों से युति या पाप ग्रहों की दृष्टि।
- ○ त्रिक स्थान से सम्बन्ध।
- ○ स्वामियों की अनिष्ट स्थान में स्थिति।
- ○ भाव, राशि या इनके स्वामियों की निर्बलता।
- ○ भाव से चतुर्थ, अष्टम एवं द्वादश स्थान में या त्रिकोण स्थान में पापग्रहों का होना।
- ○ रोग कारक ग्रहों से सम्बन्ध।

○ शुभ ग्रहों का प्रभाव न हो।

○ जातकपारिजात के अनुसार

## 7.4. अयन, दिन आदि के स्वामी-

| अयन | दिन | पक्ष | ऋतु | वर्ष | मास | क्षण |
|---|---|---|---|---|---|---|
| सूर्य | कुज | शुक्र | बुध | शनि | बृहस्पति | चन्द्रमा |

सूर्य का छः मास में, मंगल का दिन भर में, शुक्र का 15 दिन में, बुध का दो मास में,गुरु का एक मास में और चन्द्र का क्षण भर का फल होता हैं।) **प्रश्न के लग्न में जिस ग्रह का नवांश हो, वह ग्रह उस नवांश पर हो, उतने अयन आदि काल पर वह ग्रह फल देता है। यथा-**

**अस्थि रक्तं च मज्जा त्वग्वसा शुक्रं च वस्नसा।**

**पित्तं वातकफौ पित्तं वातपित्तकफाः कफः।।**

## 7.5.कालपुरुष के अङ्गों के अनुसार रोग निर्णय –

कालपुरुष के शरीर के विभिन्न अङ्ग लग्न से प्रारम्भ कर जन्माङ्ग के द्वादश भाव क्रमशः 1. शिर, 2. मुख, 3. वक्ष, 4. हृदय, 5. उदर, 6. कटि, 7. वस्ति (पेडू), 8. गुह्याङ्ग, 9. ऊरु (जङ्घा), 10. दोनों घुटने, 11. दोनों पिण्डलियाँ और 12. दोनों पैर होते हैं। कर्क, वृश्चिक और मीन राशियों के अन्तिम अंश के अन्तिम भाग (३० वें अंश की 6०वीं-कला) को भसन्धि या ऋक्षसन्धि कहते हें । अन्य के मतानुसार सभी राशियों के अन्तिम अंश के अन्तिम भाग को क्रक्षसन्धि कहते हैं।

**शीर्षानने तथा बाहू हृत्कोडकटिबस्तयः।**

**गुह्योरुयुगले जानुयुग्मे वै जङ्घेके तथा।।**

**चरणौ दौ तथा मेषात् ज्ञेयाः शीर्षादयः क्रमात्।।**( बृ.पा.हो.4.4)

जन्माङ्ग के द्वादश भाव कालपुरुष के शिर आदि विभिन्न अंगों के प्रतीक होते हैं। जैसे लग्न कालपुरुष के शिर का, द्वितीय भाव मुख का, तृतीय भाव कालपुरुष के वक्षःस्थल का प्रतीक होता है इत्यादि। इस प्रकार द्वादश भावों के अङ्गन्यास का उद्देश्य जातक के विभिन्न अङ्गों के आकार-प्रकारादि का अनुमान करना है। जो भाव पापाक्रान्त हो, निर्बल हो उस भाव से सम्बन्धित अङ्ग पीड़ित अथवा अपेक्षया ह्रस्व या निर्बल होगा तथा जो भाव पुष्ट हो, शुभग्रहों से युत या दृष्ट हो उस अङ्ग का समुचित विकास होगा या फिर वह अङ्ग दीर्घ होगा। यथा-

**शिरोवक्रोरोहृज्ज्ठरकटिवस्तिप्रजनन-**

**स्थलान्यूरूजान्वोर्युगलमिति जङ्के पदयुगम् ।**

**विलग्नात्कालाङ्गान्यलिझषकुलीरान्तिमिदं**

**भसन्तिर्विख्याता सकलभवनान्तानपि परे ॥4॥**

**7.6. ग्रहों के अनुसार रोग निर्णय-** धार्मिककर्मों के समुचितानुष्ठान के लिए स्वस्थ शरीर आवश्यक है। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के विना मनुष्य अपने कार्यों में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता और वह स्वास्थ्य उस पूर्वजन्मार्जित शुभाशुभकर्मों के अधीन है, ऐसा उल्लेख ज्योतिश्शास्त्र में प्राप्त होता कि जन्मान्तरकृत पापकर्मों के अर्जित परिणाम के कारण शरीर में व्याधि समुत्पन्न होती है।

**जन्मान्तरकृतं पापं व्याधिरूपेण जायते।**

**तच्छान्तिरौषधैर्दानैर्जपहोमार्चनादिभिः ।।**(प्रश्नमार्ग)

ज्योतिषशास्त्र में रोगोत्पन्न, रोगनिवारण क्रिया सूर्यादि ग्रहों पञ्चभूत, अस्थ्यादिधातु, वातपित्त-कफादित्रिदोषादि के कारक होते हैं एवं इनके विरीत स्थिति में होने से शरीर में व्याधियाँ जन्म लेती है।। रोग दो प्रकार के होते हैं निज और आगन्तुक, इन दोनों के भी पुनः दो प्रकार होते हैं।

**निजाः शरीरचित्तोत्थाः दृष्टादृष्टनिमित्तजाः।**

**तथैवागन्तुकाश्चैव व्याधयः स्युश्चतुर्विधाः ।।**

निज रोग और मानसिक इनके भी दो प्रकार भाग होते हैं तथा आगन्तुक रोगों के भी दृष्टनिमित्तजा व अदृष्टनिमित्तजा दो प्रकार होते हैं। इस प्रकार चार प्रकार के रोग होते हैं यथा-

1. निज- शरीर- मानसिक
2. आगन्तुक – दृष्टनिमित्तजा-अदृष्टनिमित्तजा

**वातपित्तकफोद्भूताः पृथक्संसर्गजास्तथा।**

**सन्निपातभवाश्चैते शारीरा कीर्तिता गदाः।**

**अष्टमेन तदीशेन तद्दृष्टा तद्गतेन वा।**

**विज्ञातव्याः स्युरेतेषां वीर्यतस्तत्कृता गदाः।।**(प्रश्नमार्ग)

वात-पित्त और कफ त्रिदोषों के न्यनता व अधिकता से शारीरा जन्म लेते हैं। ये शरीर रोग अष्टमस्थान से, अष्टम अधिपति से, अष्टमभाव से द्रष्ट्र ग्रहों से तथा अष्टमस्थान में स्थित ग्रहों से चिन्तन किया जाता है। ऐसा प्रश्नमार्ग में उल्लेख है।

क्रोध - भय-दुःख-कामादिमनोविकार मानसिक रोग है।

अष्टमाधिप-पञ्चमाधिप में परस्पर योग, दृष्टि, अन्योन्यकेन्द्रस्थिति इत्यादि के सम्बन्धों से मानसिकरोग का विचार करना चाहिए।

**शापाभिचारघातादिजाताः दृष्टनिमित्तजाः।**

**ज्ञेयाः षष्ठतदीशाभ्यां तद्रष्ट्रा तद्गतेन च ।।**

**रन्ध्रेशषष्ठसम्बन्धे शापाद्याः प्रबलाश्च ते।**

**अदृष्टहेतुजाः ज्ञेयाः बाधकग्रहसम्भवाः।।**

**दृष्टनिमित्तजा रोग**- दृष्टनिमित्तजा रोग महात्माओं या ज्येष्ट व्यक्तियों के शाप से, शत्रुकृत अभिचारकर्म से अपघातादि से पीडित करते हैं। इन रोगों को षष्ठभाव, षष्ठाधिप,, षष्ठभावस्थ व दृष्ट ग्रहों से विचार करना चाहिए।

**अदृष्टनिमित्तजा रोग**- बाधक ग्रहों पीडित होने पर पीडा देते हैं, इसका अष्टमाधिप-षष्ठाधिपों का परस्पर योग, दृष्टि, केन्द्रस्थित्यादि सम्बन्धों विचार करना चाहिए। दुःस्थग्रह पीडित करते हैं और, सुस्थग्रहा रक्षा करते है। यथा-

**पापाः लाभतृतीयागाः सहजवैर्ग्रत्याष्टमेभ्योऽन्यगाः**

**सौम्या मान्दिरपि त्रिकोणमृतिकेन्द्रेभ्यो ऽपरस्थिताः**

**सर्वेऽमी कथञ्चत्यनामयतनुं प्रष्टारमेवं स्थिताः ।**

**रोगग्रस्तकलेवरं च कथितेभ्योऽन्यत्र ते संस्थिताः ।।**

तृतीय, एकादशस्थ पापग्रह, तृतीय,षष्ठ,अष्टम, द्वादशभावादि अन्यत्र स्थित शुभग्रह, लग्न-चतुर्थ-पञ्चम-सप्तम- अष्टम-नवम दशमभाव से अन्यत्र स्थित मान्दि पृच्छक को स्वाथ्य लाभ को सूचित करते हैं।

**षष्ठ्यत्याष्टमदाम्बुलग्ननवमापत्येषु ये दुर्बलाः पापा**

**षष्ठमृतिव्ययेष्वपि शुभा दुःस्था भवन्ति ग्रहाः।**

**लग्नेशाध्यरयोऽतिरोगमृतिदाः दुःस्थेषु सुस्थाश्च**

**ते -ऽनुक्तस्थानगताः शशाङ्कसहिताः स्वं स्वं फलं कुर्वते ।।**

दुर्बलाः पापग्रह लग्न-चतुर्थ पञ्चम-षष्ठ-सप्तम अष्टम द्वादशभावों में स्थित पापग्रहों में जो लग्नेश का अधिशत्रु हो वह रोगकारक समझना चाहिए। इसी प्रकार षष्ठ-अष्टम द्वादशस्थ शुभग्रह भी दुष्ट ग्रह समझना चाहिए। रव्यादि ग्रह यदि अपनी दशा व अन्तर्दशा में रोगकारक हो तो निम्न प्रकार से पीडा देते हैं यथा-

**पित्तं वातयुतं करोति दिनकृद्वातं कर्फ शीतगुः**

**पित्तं भूमिसुतस्तथा शशिसुतो वातं च पित्तं कफम्।**

**जीवो वातकफौ सितोऽनिलकफौ वातं च पित्तं शनिः**

**क्षीणेन्दुस्थितराशिनाथकथितं पूर्णः कफं तोयभे ।।**(प्रश्नमार्ग)

सूर्य से वातपित्तरोग, चन्द्र से वातकफरोग, कुज से पित्तरोग, बुध से त्रिदोष, गुरु वातकफ पीडित, शुक्र वातकफ, शनि वातपित्त पीडा। यदि क्षीणचन्द्र हो तो अपनी राशि पति सम्बद्धित रोगा, जलराशिगत हो या पूर्णचन्द्र हो कफरोगों से पीडा देता है।

शरीर में सूर्यादि ग्रहों के क्रमशः अस्थि-रक्त-मज्जा- त्वक-मेद- वीर्य- स्नायु आदि धातु होते हैं। यह ग्रह अपनी-अपनी शुभाशुभ दशाकाल में शरीर में धातु विकार उत्पन्न करते हैं। जैसा महर्षि पाराशर का निर्देश है-

**अस्थि रक्तस्तथा मज्जा त्वङ्मेदो वीर्यमेव च।**

**स्नायुरेते धातवः स्यु सूर्यादीनां क्रमाद् द्विजः।।बृ.पा. हो.3.32**

महाभूत एवं रस यह अपने विकार से रोग उत्पन्न करते हैं। यह रोग वात-पित्त-कफादि के विवरीत कारण होने पर रोग उत्पन्न करते हैं। रोग शमन हेतु ग्रह सम्बन्धि रोग के कारण को ज्ञात कर औषधि सेवन, रत्नधारण, पूजा होम अर्चना आदि करनी चाहिए।

**सूर्यदोष से उत्पन्न व्याधियाँ** – पित्त की विकृति, तीव्र ज्वर, शरीर में जलन, अपस्मार (मृगी), हृदयरोग, नेत्रपीड़ा, शत्रुभव, चर्मरोग, अस्थिरोग, काष्ठ, अग्नि, आग और विष से आघात, पुत्र-स्त्री को कष्ट, चतुष्पद, चोर और सर्प से भय तथा राजा, धर्मराज (यम) ओर रुद्र कोप से भय आदि सूर्यदोष से होते हैं। यथा फलदीपिकाकार-

**ध्यातव्य**-सूर्य की पित्त प्रकृति व हड्डियाँ मजबूत होती है लेकिन सूर्य कुण्डली में निर्बल व पीडित हो तो अपनी दशा-अन्तर्दशा में पित्त व ज्वरादि से सम्बन्धित रोग देगा।

**पित्तोष्णज्वरतापदेहतपनापस्मारहृत्क्रोडज-**
**व्याधीन्वक्ति रविर्दृगार्त्यरिभयं त्वग्दोषमस्थिस्त्रुतिम् ।**
**काष्ठागन्यस्त्रविषार्तिदारतनयव्यापच्चतुष्पाद्भयं**
**चोरक्ष्मापतिधर्मदेवफणभृद्भूतेशभूतं भयम् ॥२॥**

**चन्द्रदोष से उत्पन्न व्याधियाँ -**

निद्रा सम्बन्धी विकार (अतिनिद्रा- निद्राभाव), आलस्य, कफविकृति, अतिसार, फोड़ा (कार्बंकल जैसा घातक फोड़ा), शीतज्वर (मलेरिया, टायफायड आदि), सींग वाले पशु अथवा जल में रहने वाले जीव (मगर आदि से) भय, मन्दाग्नि, अरुचि, स्त्रीजन्य व्याधि, कामला रोग, जल से भय तथा बालग्रह मानसिक श्रान्ति, रक्तविकार- रक्तप्रवाह, यम, सर्प और यक्षिणी आदि के कोप से भय आदि चन्द्रमा के दूषित होने से होते हैं।

**निद्रालस्यकफातिसारपिटकाः शीतज्वरं चन्द्रमाः**
**भृङ्ग्यन्जाहतिमग्मिमान्द्यमरुचिं योषिद्व्यथाकामिलाः।**
**चेतः शान्तिमसृग्विकारमुदकाद्भीतिं च बालग्रहाद्**
**दुर्गाकिन्नरधर्मदेवफणभद्यक्ष्याच्च भीतिं वदेत् ॥३॥**

**भौमदोष से उत्पन्न व्याधियाँ-**

अत्यधिक प्यास, रक्त-विकार, पित्तज ज्वर, अग्नि, विष और शस्त्राघात का भय, कुष्ठरोग, नेत्र-विकार, गुल्मरोग (उदर स्फोट, अल्सर आदि), अपस्मार (मृगी), मज्जा सम्बन्धी विकार, शारीरिक रूक्षता, पामिका, अङ्गविकृति, राजा, शत्रु और मित्र से उत्पीड़न, भाई, पुत्र, शत्रु और मित्रों से विवाद-कलह, गन्धर्व आदि दुष्टात्माओ से कष्ट तथा शरीर के ऊपरी भाग में (फेफडे, गले, मुख, नेत्र, कान की बीमारी आदि जातक को मङ्गल के दूषित होने से प्राप्त होता है।

**तृष्णासृक्कोपपित्तज्वरमनलविषास्त्रर्तिकुष्ठाक्षिरोगान्**

गुल्मापस्मारमज्जाविहतिपरुषतापामिकादेह भङ्गान् ।

भूपारिस्तेनपीडां सहजसुतसुहृद्वैरियुद्धं विधत्ते

रक्षोगन्धर्वघोरग्रह भयमवनीसूनुरूर्ध्वाङ्गरोगम् ॥4॥

**बुधदोष से उत्पन्न व्याधियाँ-**

मानसिक भ्रान्ति (विभ्रम), वाणीदोष, नेत्र, कण्ठ और नासिका में विकार, ज्वर, वात-पित्त-कफ के विकार जनित व्याधि, विष-सेवन से रोग, त्वचा, चर्मरोग, स्नायुमण्डल, पाण्डुरोग, दुःस्वप्न, विचर्चिका, पामिका, अग्नि में गिरने का भय, बन्धन और कठोर व्यवहार से श्रान्ति, गन्धवादि कुटिल आत्माओं से कष्ट आदि बुध के कारण होते हैं।

भ्रान्तिं दुर्वचनं दृगामयगलघ्राणोत्थरोगं ज्वरं

पित्तश्लेष्मसमीरजं विषमपि त्वग्दोषपाण्ड्वामयान् ।

दुःस्वर्णं च विचर्चिकाग्निपतने पारुष्यबन्धश्रमान्

गन्धर्वक्षितिहर्म्यवाहिभिरपि ज्ञो वक्ति पीडां ग्रहैः ॥5॥

**बृहस्पति-दोष से उत्पन्न व्याधियाँ-**

गुल्मरोग, आन्त्र-विकृति (आँत की विकृति) जन्य ज्वर, शोकजन्य व्याधियाँ, मूर्च्छा (ये सभी व्याधियाँ कफ के असन्तुलन से उत्पन्न होती हैं), कर्ण-विकार, मोहयस्तता, देवस्थान सम्बन्धी विवाद से कष्ट, ब्राह्मण- शाप से कष्ट, यक्ष, किन्नर, विद्याधरादि द्वारा उत्पीडन तथा विद्वानों और गुरुजनों के प्रति किये गये दुर्व्यवहार-जनित व्याधियों से कष्ट ये सभी बृहस्पति के दूषित होने पर जातक को प्राप्त होते हैं।

गुल्मान्त्रज्वरशोकमोहकफजान् श्रोत्रार्तिमोहामयान्

देवस्थाननिधिप्रपीडनमहीदेवेशशापोद्भवम् ।

रोगं किन्नरयक्षदेवफणभृद्विद्याधराद्युद्भवं

जीवः सूचयति स्वयं बुधगुरूत्कृष्टापचारोद्भवम् ॥6॥

**शुक्रदोष से उत्पन्न व्याधियाँ-**

शुक्र के दूषण से , पाण्डुरोग, वात-कफविकार जन्य व्याधियाँ, नेत्र- विकार, मूत्र-विकार (मूत्र का अधिक आना या उसमें अवरोध), प्रमेह, जननेन्द्रिय सम्बन्धी विकार, मूत्रकृच्छ्र , मैथुन में असमर्थता, वीर्यस्राव या शीघ्रपतन, अधिक मैथुन से शारीरिक कान्तिहीनता, सुखण्डी (क्षय), योगिनी, यक्षिणी आदि से उत्पीड़न तथा परमप्रिय मित्र से मैत्री भङ्ग आदि दोष होते हैं।

**ध्यातव्य**-यदि शुक्र अष्टमभाव में पापाक्रान्त हो तो प्रमेह, जननेन्द्रिय सम्बन्धी विकार, मूत्र, मैथुन में असमर्थता, वीर्यस्राव, शीघ्रपतन आदि रोग बलाबल के अनुसार अवश्य होते हैं।

**पाण्डुश्लेष्ममरुत्रकोपनयनव्यापत्रमेहामयान्**

**गुह्यस्यामयमूत्रकृच्छ्रमदनव्यापत्तिशुक्लस्रुतिम् ।**

**वारस्त्रीकृतदेहकान्तिविहतिं शोषामयं योगिनी**

**यक्षीमातृगणाद्भयं प्रियसुहृद्भङ्गं सितः सूचयेत् ॥7॥**

**शनिदोष से उत्पन्न व्याधियाँ-**

शनि के दूषण से वात-कफविकार जन्य व्याधियाँ, पादवैकल्य (पक्षाघात या चोट आदि के कारण), विपत्ति, थकान, पतन्द्रा, भ्रान्ति, कुक्षिरोग, अन्तःशूल (मार्मिक आघात या हृत्शूल), सेवकों का विनाश, पसली में कष्ट, स्त्री-पुत्रादि को कष्ट, अङ्ग-वैकल्य (अङ्ग-भङ्ग हो जाना), मार्मिक वेदना, वृक्ष (काष्ठ) या पत्थर से आघात तथा पिशाचादि से उत्पीडन आदि जातक को भोगने होते हैं।

**वातशलेष्म्रविकारपादविहतिं चापत्तितन्द्राश्रमान्**

**भ्रान्तिं कुक्षिरुगन्तरुष्णभूतकध्वंसं च पार्श्वहितिम् ।**

**भार्यापुत्रविपत्तिमङ्गत्रिहतिं हत्तापमर्कात्मजो**

**वृक्षाश्मक्षतिमाह कश्मलगणैः पीडां पिशाचादिभिः ॥8॥**

**राहु दोष से उत्पन्न व्याधियाँ-**

राहु के विकार से ताप, कोढ़, बौद्धिक विभ्रम (विवेकशून्यता), विषजन्य व्याधि, पैरों में रोग व चोट, स्त्री-पुत्रादि को कष्ट तथा पिशाच एवं सर्पादि से भय होता है।

**केतु और मान्दि दोष से उत्पन्न व्याधियाँ-**

केतु के विकार से ब्राह्मण और क्षत्रियों के विरोध से कलह, शत्रुओं से भय । गुलिक के प्रकोप से प्रेतबाधा, विषभय, दैहिक पीडन और किसी निकट सम्बन्धी की मृत्यु से अशौच और प्रेत से भय होता है।

**स्वर्भानुर्हृदि तापकुष्ठविमतिव्याधिं विषं कृत्रिमं**

**पादार्तिं च पिशाचपन्नगभयं भार्यातनूजापदम्।**

**ब्रह्मक्षत्रविरोधशत्रुजभयं केतुस्तु संसूचयेत्**

**प्रेतोत्थं च भयं विषं च गुलिको देहार्तिमाशौचजम् ॥9॥**

## 7.7. भावानुसार रोग विचार-

**नेत्ररोग-** यदि द्वादश या द्वितीय भाव में सूर्य या चन्द्रमा स्थित होकर यदि मंगल और शनि से दृष्ट हो या युत हो तो नेत्ररोग होता है।

**कर्णरोग-** तृतीय भाव, एकादश भाव और बृहस्पति यदि मंगल और शनि से युत या दृष्ट हो तो कर्णरोग होता है।

**उदररोग-** षष्ठेश या अष्टमेश के साथ मंगल यदि पंचम भाव में स्थित हो तो जातक उदरव्याधि से पीडित होता है अर्थात् सूर्य-मंगल-शनि-राहु- केतु ग्रह पञ्चमभाव में हों तो उदर रोग के कारक होते हैं।

**गुदारोग-** षष्ठेश और अष्टमेश यदि सप्तम भाव में या फिर षष्ठेश अष्टम में स्थित हों तो गुदामार्ग में रोग होता है अर्थात् यदि शुक्र सप्तम व अष्टम हो तो जननेन्द्रिय में प्रेमेहरोग और मूत्र सम्बन्धी तथा अष्टम में हो तो गुदा सम्बन्धी व्याधि से जातक पीडित होता है।

**ध्यातव्य-** यदि द्वादश भाव से वाम नेत्र और द्वितीय भाव से दक्षिण नेत्र का विचार किया जाता है। सूर्य - चन्द्र यदि द्वितीय भाव में या एक दूसरे के घर में हों और मंगल और शनि दोनों से दृष्ट हों तो नेत्ररोग होता है। यदि सूर्य - चन्द्रमा के साथ मंगल हो और उन पर शनि की दृष्टि हो तो आपरेशन आदि की सम्भावना होती है। उनके सूर्य या चन्द्रमा के साथ यदि शनि युत हो और मंगल उनको देखता हो तो भी आपरेशन आदि उपचार से नेत्रज्योति प्राप्त हो सकती है लेकिन यदि द्वितीय या द्वादशभावस्थ सूर्य और चन्द्रमा को शनि और मंगल दोनों की पूर्ण दृष्टि हो तो नेत्रदृष्टि नष्ट हो जाती है।

इसी प्रकार कर्णरोग का विचार करना चाहिए। तृतीयभाव से दक्षिण कर्ण और एकादश भाव से वाम कर्ण का विचार होता है अर्थात् तृतीय- ग्यारहवें भाव में बृहस्पति- मंगल या शनि से युत व दृष्ट हों तो कान के रोग होते हैं। अर्थात् गुरु मंगल से दृष्ट व युत हो तो कान में फोड़ा, फुन्सी आदि से सम्बन्धित रोग होते हैं तथा गुरु शनि से युत व दृष्ट हो तो चोट व वात से रक्त विकार सम्बन्धित रोग होते हैं। तृतीय भाव के पीडित होने से स्वजनों एवं बन्धु-बान्धवों, ज्येष्ठ भ्राता आदि को कष्ट और एकादश भाव के पाप पीडित होने से किसी निकट सम्बन्धी की हानि होती है।

**मन्दारान्वितवीक्षिते व्ययधने चन्द्रारुणौ चाक्षिरुक्**

**शौर्यायाङ्गिरसो यमारसहिता दृष्टा यदि श्रोत्ररुक् ।**

**सोग्रे पञ्चमभे भवेदुदररुग्रन्ध्रारिनाथान्विते**

**तद्वत्सप्तमनैधने सगुदरुक्छुक्रे च गुह्यामयः** ॥1

**यदि छठे या आठवें भाव में -** सूर्य स्थित हो तो ज्वरादि का भय होता है, मंगल या केतु हों तो व्रण, चोट आदि का भय होता है, शुक्र हो तो जननेन्द्रिय में रोग होता है, बृहस्पति हो तो क्षयरोग का भय होता है, शनि हो तो वातज व्याधियों का भय होता है। मंगल से दृष्ट राहु यदि छठे या आठवें भाव में स्थित हो तो व्रण की सम्भावना होती है उक्त भावों में यदि शनि के साथ चन्द्रमा स्थित हो तो प्लीहा (तिल्ली) शोथ से उत्पन्न व्याधि होती है। जलराशि (कर्क, मीन, वृश्चिक और मकर का उत्तार्द्ध) का क्षीण चन्द्रमा (कृष्ण पञ्चमी से शुक्ल पञ्चमी तक का चन्द्रमा क्षीण होता है) पापग्रह के साथ यदि षष्ठ या अष्टम भाव में स्थित हो तो अम्बुरोग (जलोदर) या क्षयरोग होता है।

**षष्ठेऽकेऽप्यथवाष्टमे ज्वरभयं भौमे च केतौ व्रणं**

**शुक्रे गुह्यरुजं क्षयं सुरगुरौ मन्दे च वातामयम् ।**

**राहौ भौमनिरीक्षिते च पिलकां सेन्दौ शनौ गुल्मजं**

**क्षीणेन्दौ जलभेषु पापसहिते तत्स्थेऽम्बुरोगं क्षयम्** ॥11॥

## 7.8. रोग एवं मृत्यु के कारण-

व्यक्ति की मृत्यु किस रोग से होती है उसका ज्ञान कैसे करना चाहिए। यदि शनि की युति सूर्यादि ग्रहों से हो तो सूर्यादिग्रहों के धातुदोष से शरीर में रोग उत्पन्न होते हैं। यदि गुलिकनवांश से सप्तम भाव में शुभग्रह हों तो सुमृत्यु। पापग्रह हों तो अपमृत्यु। पुनः प्रत्येक ग्रह के गुलिकनवांशत से सप्तमराशि स्थितग्रहों के अनुसार मृत्यु का लक्षण कहना चाहिए। सप्तम राशि में सूर्य हो तो राज दण्डादि द्वारा मृत्युः ,कुज हो तो युद्ध में, क्षीणचन्द्र हो तो जल से मृत्यु, शनि हो तो वञ्चना से, राहु हो तो विष से मृत्यु होती है। यथा प्रश्नमार्ग–

**मान्द्यारुढनवांशकामगृहगाः सौम्याः सुमृत्युप्रदाः**

**पापास्तत्र गतास्तु दुर्मृतिकरास्तेष्वर्क उर्वीपते।**

**क्षीणेन्दुः सलिले युधि क्षितिसुतः सूर्यात्मजो वञ्चनात्**

**राहुः पन्नगदंशनान्मरणदो यद्वा विषस्पर्शनात्।।** ( प्रश्नमार्ग 11.13)

अष्टम भावस्थ ग्रह तथा अष्टम भाव के द्रष्टा ग्रह, उनमें जो बलवान् हो उस ग्रहजन्य रोग से जातक की मृत्यु होती है। यदि अष्टम भाव ग्रहशून्य हो और उस पर किसी ग्रह की दृष्टि भी न हो तो अष्टम भावजन्य व्याधि से अथवा अष्टमेशाधितिष्ठित भावजन्य व्याधि से मृत्यु होती है। अष्टम भाव गृह्यप्रदेश का परिचायक है। अत: गुह्यांग सम्बन्धी व्याधि से मृत्यु होती है। इसी प्रकार अष्टमेश यदि चतुर्थ भाव में हो तों हृदयरोग से, पंचम भाव में हो तो उदरव्याधि से मृत्यु सम्भाव्य होती है।

**जातो गच्छति येन केन मरणं वक्ष्येऽथ तत्कारणं**

**रन्ध्रस्थैस्तदवेक्षकैर्बलवता तस्योक्तरोगैर्मृतिः।**

**रन्ध्रर्क्षोक्तकरुजाथवा मृतपतिप्राप्तर्क्षदोषेण वा**

**रन्ध्रेशेन खरनत्रिभागपतिना मृत्यु वदेन्निश्चितम्॥1२॥**

अष्टमेश ग्रहजनित व्याधि से मृत्यु होती है । अथवा लग्न से २२वें द्रेष्काण का जो राशि स्वामी हो उस स्वामी के जो रोग हैं, उसके अनुसार व्याधि से मृत्यु होती है । अष्टम भाव का प्रथम द्रेष्काण खर द्रेष्काण होता है।

जो ग्रह अष्टम भाव में स्थित हो अथवा जो ग्रह आठवें भाव को देखते हों तो उनसे सम्बन्धित व्याधि के कारण जातक की मृत्यु होती है। यदि अष्टम भाव ग्रहशून्य हो और किसी ग्रह से दृष्ट भी न हो तो अष्टमभावस्थ राशि के गुणधर्मानुरूप व्याधि से जातक की मृत्यु होती है। यथा फलदीपिकाकार-

**ग्रहेण युक्ते निधने तदुक्तरोगैर्मृतिर्वाऽथ तदीक्षकस्य।**

**ग्रहैर्विमुक्ते निधनेऽथ तस्य राशेः स्वभावोदितदोषजाता ॥1३॥**

**सूर्य** -अग्नि, तीव्र ज्वर, पित्त और शस्त्रघात से मृत्यु देता है।

**चन्द्रमा-** हैजा( विषूचिका), जलोदर(Oedema)और फेफड़े की बीमारी से मृत्युदायक होता है।

**मंगल-** दुर्घटना, रक्तस्त्राव, जलना, कुत्सित अभिचार( जादू- टोना) व शस्त्राघात से मृत्यु करता है।

**बुध-** पाण्डु(पीलिया), रक्ताल्पता, यकृत् सम्बन्धित रोग और स्नायुज विकार के कारण मृत्यु देता है।

**बृहस्पति**- कफावरोध के कारण रोग देता है।

**शुक्रग्रह**- स्त्रीसंसर्गजनित, मूत्ररोग, जननेन्द्रिय व्याधियों के द्वारा मृत्युदायक होता है।

**शनिग्रह-** वायुप्रकोपजन्य व्याधि, लकवा, हृदय रोग, सन्निपात ज्वर के द्वारा शनि मृत्युकारक होता है।

**अग्न्युष्णज्वरपित्तशस्त्रजमिनश्चन्द्रो विषूच्यम्बुरुग्**

**यक्ष्मादि क्षितिजोऽसृजा च दहनक्षुद्राभिचारायुधैः।**

**पाण्ड्वादि भ्रमजं बुधो गुरुरनायासेन मृत्युं कफात्**

**स्त्रीसङ्गोत्थरुजं कविस्तु मरुता वा सन्निपातैः शनिः ॥14॥**

**राहुग्रह-** कुष्ठ, विषाक्त भोजन करने से, विषैले कीटादि के खाने से या मसूरिका (फोड़े -फुंनसियों) रोग से मृत्यु होती है।

**कुष्ठेन वा कृत्रिमभक्षणाद्वा राहुर्विषाद्वाथ मसूरिकाद्यैः।**

**कुर्याच्छिखी दुर्मरणं नराणां रिपोर्विरोधादपि कीटकाद्यै: ॥15॥**

**केतुग्रह-** अपमृत्यु दुर्घटना में अकस्मात् आत्महत्या आदि, विवाद में हत्या से जीवनलीला समाप्त होती है।

**लग्नादष्टमराशेः स्वभावदोषोद्भवं वदेन्मृत्युम्।**

**निधनेशस्य नवांशस्थितराशिनिमित्तदोषजनितं वा ॥16॥**

जन्मलग्न से अष्टम भाव (अष्टमेश, अष्टमभावस्थ व अष्टमभाव द्रष्टा ग्रहों के) स्वभावादि जन्य व्याधि से अथवा अष्टमेश की नवांश राशिजन्य दोष या रोग से मृत्यु होती है।

## 7.9. मेषादि द्वादश राशिजन्य दोष-

ग्रहों के रोग दोष को आपने पढ़ा अब मेषादि राशियों के दोष से उत्पन्न व्याधियों का विचार करेंगे।

**पैत्त्यज्वरोष्णौर्जठराग्निनाजे वृषे त्रिदोषैर्दहनाच्च शस्त्रात्।**

**युग्मे तु कालश्वसनोष्णशूलैरुन्मादवातारुचिभिः कुलीरे ॥97॥**

**मेष राशि-** पित्त, ज्वर( लू लगना), जठराग्नि से, दाह व यकृत आदि जन्य व्याधि से रोग होते हैं।

**वृष** राशि- त्रिदोष (वात-पित्त-कफ) के प्रकोप से उत्पन्न व्याधि से, अग्नि से जलने से अथवा शस्त्राघात के कारण रोग होते हैं।

**मिथुन राशि**- कास-श्वास, अस्थमा अथवा पित्तदोष जन्य शूल से दर्द होता है।

**कर्क राशि-** मानसिक रोग, वायु विकार से रोग उत्पन्न होते हैं।

**मृगज्वरस्फोटजशत्रु जं हरौ स्त्रियां स्त्रियागुह्यरुजा प्रपातनात्।**

**तुलाधरे धीज्वरसन्निपातजं प्लीहालिपाण्डुग्रहणीरुजालिनि ॥98॥**

**सिंह राशि-** वन्य पशुओं के आघात से मृत्यु, ज्वर, स्फोट, फोड़ा, कैंसर एवं शत्रु द्वारा पीडित होना पड़ता है।

**कन्या राशि-** स्त्रियों के कारण व्याधि, गुह्याङ्ग सम्बन्धित रोग एवं उच्च उच्च स्थान के गिरने से रोग व मृत्यु समझना चाहिए।

**तुलाराशि-** मस्तिष्कज्वर ( Brain fever), एवं सन्निपात से सम्बन्धित रोग होते हैं।

**वृश्चिक राशि-** तिल्ली विकार तथा पाण्डुरोग।

**वृक्षाम्बुकाष्ठायुधजं हयाङ्ग मृगे तु शूलारुचिधीभ्रमाद्यैः।**

**कुम्भे तु कासज्वरयक्ष्मरोगैर्जले विपद्वा जलरोगतोऽन्त्ये ॥19॥**

**धनु राशि-** वृक्ष से गिरने, काष्ठ व शस्त्र से मृत्यु होती है।

**मकर राशि-** उदर दर्द ( एपिण्डीसाइटिज) अरुचि (मन्दाग्नि), मानसिक रोग या स्नायु सम्बन्धित रोग होते हैं।

**कुम्भ राशि-** श्वास-खाँसी, यक्ष्मा (क्षयरोग) तथा ज्वर सम्बन्धित रोग होते हैं।

**मीन राशि-** जल में डूबने से या जलोदरादि से मृत्यु होती है।

अष्टम भाव में पापग्रह की राशि हो और पापग्रह से युक्त हो तो शस्त्राघात, अग्नि के जलने से, वन्य पशुओं व्याघ्र आदि के आक्रमण या फिर विषैले कीटादि के काटने से पीड़ा होती है। यदि दो पापग्रह केन्द्रस्थ होकर परस्पर पूर्ण दृष्टि देखते हों तो सरकार या राजा के प्रकोप से या शस्त्र, सर्प, अग्नि आदि से मृत्यु होती है। यथा फलदीपिकाकार-

**पापक्षयुक्ते निधने सपापे शस्तरानलव्याघ्रभुजङ्गपीडा ।**

**अन्योन्यदृष्टौ व्यशुभौ सकेन्द्रौ कोपात्प्रभोः शस्त्रविषाग्निजेर्वा ॥२०॥**

बारहवें भाव की राशि में शुभ ग्रह हों अथवा द्वादशेश भी सौम्य ग्रह की राशि व सौम्य ग्रह के नवांश में हो अर्थात् द्वादशेश की नवांश राशि में भी शुभग्रह की राशियाँ हों या इनसे सौम्य ग्रह का सम्बन्ध हो तो बिना किसी क्लेश के मृत्यु होती है। वहीं यदि द्वादश भाव में पापराशि हो, द्वादशेश पापग्रह की राशि में हो एवं उसका बारहवें भाव का नवांशपति भी पापग्रह हो अथवा द्वादशभाव को पापग्रह देखते हों तो कष्ट से मृत्यु होती है। यथा फलदीपिकाकार-

**सौम्यांशके सौम्यगृहेऽथ सौम्यसम्बन्धगे वा क्षयभे क्षयेशे।**

**अक्लेशजातं मरणं नराणां व्यस्ते तदा क्रूरमृतिं वदन्ति ॥२१॥**

## 7.10. रोग निराकरण के सामान्य उपाय-

शरीर किसी प्रकार की दैहिक, दैविक और भौतिक त्रय ताप ही (अमीव) व्याधियाँ हैं, जिनसे प्राणी सन्तप्त रहते हैं। **यथा- स्वे क्षेत्रे अनमीवा विराज। (अथर्ववेद 11.1.22)**

शरीर को नीरोग रखने के लिए वैदिक चिकित्सा-पद्धतियों के तीन प्रकारों का उल्लेख किया गया है -

1. आसुरी चिकित्सा -शल्य क्रिया (आपरेशन)
2. मानुषी चिकित्सा -(औषधि प्रयोग द्वारा)
3. देवी चिकित्सा-( प्राणायाम, हवन, जप, अनुष्ठान द्वारा)

वेदों में अश्विनी कुमारों को दैवभिषक् (देवताओं का वैद्य) कहा गया है।

**प्रत्योहतामश्विना मृत्युमस्मद् देवानामग्रे भिषजा शचीभिः। (अथर्ववेद 7।5३।1)**

रोग उत्पन्न दो कारण होते हैं-

1. कर्मजव्याधि (उत्पत्ति दोष एवं पापजन्य कर्म द्वारा)
2. मिथ्या आहार- विहार से

**मिथ्याहारविहाराभ्यां दोषाह्यामा श्रयाः स्थिताः।**

अभी कौनसा ग्रह किस धातु का कारक है और उशका उपचार कैसे किया जाता इसका विचार करेंगे क्योंकि ब्रह्मा के द्वारा इसलिए ही इन औषधियों की उत्पत्ति की है-

## 7.11. पञ्चमहाभूतोत्पत्ति-

ब्रह्मा के मन से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल तथा जल से पृथ्वी की क्रमशः उत्पत्ति हुई । एक-एक गुणों की वृद्धि से ये पाँचों पञ्च महाभूत कहे गये हैं।यथा- आर्षपुरुष सूर्यसिद्धान्तकार-

**मनसः खं ततो वायुरग्निरापो धरा क्रमात् ।**
**गुणैकवृद्धया पञ्चेति महाभूतानि जज्ञिरे ॥। २३ ॥**

चन्द्र ग्रह शरीर का और सूर्य आत्मा का कारक है। भौमादि पाँच ग्रह पञ्चज्ञानेन्द्रियों के कारक होते हैं – **अग्नि तत्व के कारक** सूर्य और मङ्गल रूप के यानि तेज के ( देखने की शक्ति) **पृथ्वी तत्व** के कारक बुध घ्राणशक्ति का, **जल तत्व के कारक** शुक्र एवं चन्द्रमा रस (स्वाद ) के एवं बृहस्पति **आकाश तत्व** का

अधिपति होने से वाक्शक्ति के कारक हैं। सूर्य के शत्रुग्रह गुलिक, राहु और केतु जातक को शारीरिक और आत्मिक कष्ट देते हैं। शेष ग्रह **वायु तत्व** के कारक शनि, राहु और केतु स्पर्श के कारक हैं। यथा फलदीपिकाकार-

**देहो देही हिमरुचिरिनस्त्वन्द्रियाण्यारपूर्वा**

**आदित्यद्विङ्गुलिकशिखिनस्तस्य पीडाकराः स्युः।**

**गन्धः सौम्यो भृगुजशशिनौ द्वौ रसौ सूर्यभौमौ**

**रूपौ शब्दो गुरुरथ परे स्पर्शसंज्ञाः प्रदिष्टाः ॥२६॥**

ग्रह की सबलता या निर्बलता उन अङ्गों को प्रभावित करती है जिनके वे कारक कहे गए हैं। जैसे किसी व्यक्ति के जन्माङ्ग में यदि बुध निर्बल हो तो उस व्यक्ति की घ्राणशक्ति निर्बल होगी। बृहस्पति के बलवान् होने पर जातक अच्छा वक्ता हो सकता है और वही बृहस्पति निर्बल होगा तो श्रवण दोष। इसी प्रकार अन्य ग्रहों के विषय में समझना चाहिए।

**पञ्चमहाभूत-** यह अपने विकार से रोग उत्पन्न तथा रोग होने पर रोग को सही भी करते हैं। अग्नि सोमात्मक सूर्य एवं चन्द्रमा की उत्पत्ति हुई। अर्थात् अग्नि स्वरूप **तेजपिण्ड** सूर्य की तथा सोम **अमृत** स्वरूप **जलमय-पिण्ड** चन्द्र की उत्पत्ति हुई। तदनन्तर क्रमशः अग्नि महाभूत से मङ्गल, भू पृथ्वी से बुध, आकाश से बृहस्पति, जल से शुक्र तथा वायु से शनि की उत्पत्ति हुई

**सूर्यादि सातों ग्रहों में क्रमशः अग्नि, जल, अग्नि, पृथ्वी, आकाश, जल और वायु तत्त्वों की प्रधानता होती है।** यथा- सूर्यसिद्धान्त-

ध्यातव्य-पञ्चम एवं नवम भाव से ग्रह सम्बन्ध के अननुसार जातक देवता की भक्ति व पूजा करता है।

**अग्नीषोमौ भानुचन्द्रो ततस्त्वङ्गारारकादयः ।**

**तेजोभूखाम्बुवातेभ्यः क्रमशः पञ्च जज्ञिरे ॥ २4 ॥**

**फलदीपिकार- सूर्यादग्निजलाग्निभूमिखपयोवाय्वात्मकाः स्युर्ग्रहाः ॥२7॥**

सूर्यादि ग्रहों के धातु - रुद्र (शिव), अम्बा (पार्वती), कार्तिकेय, विष्णु, ब्रह्मा, लक्ष्मी और यम सूर्यादि सात ग्रहों के अधिष्ठाता देवता हैं । राहु के देवता शेषनाग और केतु के देवता ब्रह्मा हैं।

**रुद्राम्बागुहविष्णुधातृकमलाकालाह्यजा देवताः।**

## 7.12. सूर्यादि ग्रहों के अन्न-

**गोधूमं तण्डुलं वै तिलचणककुलुत्थाढकश्याममुद्गा**

**निष्पाबा माष अर्केन्द्वसितगुरुशिखिक्रूरविद्भृग्वहीनाम् ।**

सूर्य का अन्न गेहूँ, चन्द्रमा का चावल, शनि का तिल, बृहस्पति का चणक (चना), केतु का कुलुत्य (कुल्थी), मङ्गल का मसूर दाल, बुध का मूँग, शुक्र का श्याम मूँग और राहु का अन्न उडद( सप्तधान्य) है।

**7.13. ग्रहों के रत्न** -सूर्य का रत्न माणिक्य हे, चन्द्रमा का निष्कलंक मुक्ता, भोम का रत्न मूँगा, बुध का रत्न मरकत (पन्ना), बृहस्पति का रत्न पुखराज, शुक्र का रत्न वज्र (हीरा) और शनि का रत्न नील (नीलम), राहु का रत्न गोमेदक और केतु  वैदूर्य मणि (लहसूनियाँ) हैं।

**माणिक्यं तरणेः सुधार्यममलं मुक्ताफलं शीतगो-**

**र्माहेयस्य च विद्रुमं मरकतं सौम्यस्य गारुत्मतम्।**

**देवेड्यस्य च पुष्परागमसुरामात्यस्य वज्रं शने-**

**नीलं निर्मलमन्ययोश्च गदिते गोमेधवैदूर्यके ॥(फलदीपिका29)**

**7.14.सूर्यादि ग्रहों के धातु-**

**मज्जास्नायुसाऽस्थिरशुक्ररुधिरत्वग्धातुनाथाःक्रमाद्**

**आरार्कीज्यदिनेशशुक्रशशभृत्तारासुताः कीर्तिताः।।28.।।**

| | | | |
|---|---|---|---|
| गुरु-वसा | 1 कुज- मज्जा | शुक्र –वीर्य | बुध-चर्म |
| शनि- स्नायु | **धातु विचार** | | चन्द्र- रक्त |
| शनि- स्नायु | | | सूर्य- अस्थि |
| गुरु-वसा | 8  कुज- मज्जा | शुक्र –वीर्य | बुध-चर्म |

**7.15.रोगानुसार ग्रहों के रसविचार -**

**लवणकटुकषायस्वादुतिक्ताम्लमिश्राः शशिरविशनिजीवारासुरेज्यज्ञनाथाः।**

**अयनद्वसपक्षत्वर्त्वब्दमासत्क्षणेशा रविकुजसिसौम्या मन्दजीवेन्दवश्च।।29।।**

| **रस** | लवण | कटु | कषाय | मधुर | तिक्त | अम्ल | मिश्रित |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| **ग्रह** | चन्द्र | रवि | शनि | बृहस्पति | मङ्गल | शुक्र | बुध |

अनिष्टकर ग्रहों के प्रभाव से मुक्ति हेतु जिस ग्रह की महादशा व अन्तर्दशा में रोग हो उस ग्रह के अन्न, रत्न, धातु, रस आदि पदार्थों का देवताओं को प्रसाद लगाना, सेवन, दान तथा रत्न धारण करने से स्वाथ्य लाभ होता है। अर्थात् ये सभी औषधियाँ हैं।

इस प्रकार ग्रह-राशियों के आधार पर जन्मकुण्डली के भावों का विचार करते हुए। षष्ठ भाव में स्थित ग्रह, अष्टम और द्वादश भावस्थ ग्रह एवं षष्ठेश और षष्ठेश से संयुक्त ग्रहों का रोग के कारण एवं शरीर में जायमान रोगोत्पत्ति का कारण जानने के लिए विचार करना चाहिए। दो अथवा तीन प्रकार से यदि एक ही रोग निर्दिष्ट हो तो वह रोग कहना चाहिए। जन्म कुण्डली या जन्माङ्ग समय की स्थिति का चिन्तन करते हुए जातक के जीवन की विविध अव्यवस्थाओं, विविध घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। कुण्डली के सभी भाव जीवन के किसी न किसी क्षेत्र से सम्बन्धित होते हैं। ये सभी बारह भाव भिन्न- भिन्न काम करते हैं।

केन्द्रभाव- 1,4, 7,10, त्रिकोण भाव- 5, 9, उपचय भाव- 3, 6, 10, 11, पणफर भाव 2, 5, 8, 11 आपोक्लिम भाव 3, 6, 9, 12, मारक भाव 2, 7 और त्रिक भाव- 6, 8, 12 हैं। इनमें में सम्पूर्ण विश्व विराजमान है। विश्व का विचार करने के लिए हमें आवश्यकता है कि कौन राशि, कौन ग्रह, कौन नक्षत्र भचक्र में कहाँ स्थित तथा भाव का मान कितना है। यदि भाव तथा ग्रह का सम्बन्ध ब्रह्माण्ड की घटनाओं से है यदि हम इनके सम्बन्ध को समझ जाए तो बोल सकते हैं कि कहाँ, कब, और कौन सी घटनाएँ घटित होने वाली हैं। अतः इसके लिए भाव के कारकत्त्व का ज्ञान बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। बारह राशियों की तरह कुण्डली में बारह भावों की आचार्यों ने गवेषणा की क्योंकि ये ग्रह, राशि एवं भाव जिस विषय के कारक होते हैं। वे अपनी महादशा, अन्तरदशा और प्रत्यन्तर दशा में बलाबल के अनुसार शुभाशुभ फल अवश्य देते हैं। सभी व्यक्ति अपनी- अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण करना चाहते हैं लेकिन वह सफलता भावों में स्थित ग्रह के बल और दशा पर निर्भर करती है। अर्थात् शुभ भावेश की दशा आने पर सामान्य प्रयास भी किया जाए तो रोगों को चिकित्सादि से मुक्ति अवश्य मिल जाती है लेकिन वही अशुभ ग्रह की दशा हो तो जीवन आनन्दोपभोग के अनेकानेक प्रयास करने पर भी मानव को आनन्द तो दूर उसके शरीर को भी आत्मा त्याग देती है।

इस प्रकार रोगनिर्णय और रोग शमन के लिए अनेक विचार आचार्यों ने बतलाएँ हैं। औषधसेवन के साथ- साथ ग्रहशान्ति, दान, जप, होम, अर्चना, उपवासादि से रोग अवश्य शमन हो जाते है ऐसा शास्त्रकारों का विश्वास है।

समाप्त

**लघूत्तरीय प्रश्न-**

1. ज्योतिषशास्त्र में प्रमुखतः आयु कितने प्रकार की होती है? तीन प्रकार (अल्पायु- मध्यायु और दीर्घायु)।

2. आयु का विचार किस भाव से किया जाता है? **अष्टमभाव** ।

3. षष्ठ भाव में स्थित ग्रह, अष्टम और द्वादश भावस्थ ग्रह एवं षष्ठेश और षष्ठेश से संयुक्त ग्रहों से क्या विचार करना चाहिए? **रोगों का ज्ञान**।

4. मारक भाव कौन- कौन से हैं? **द्वितीय- सप्तम** (2-7)।

5. दक्षिण कर्ण और वाम कर्ण के रोगों का विचार किस भाव से किया जाता है? **तृतीयभाव -एकादश भाव से** ।

**निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-**

**9.** . चन्द्रग्रह शरीर का और ................आत्मा का कारक है। **सूर्य**।

**10.** ..................में पापग्रह की राशि हो और पापग्रह से युक्त हो तो शस्त्राघात, अग्नि के जलने से पीड़ा होती है। **अष्टम भाव** ।

**11.** अष्टमेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो ..................... से मृत्यु व पीड़ा होती है । **हृदयरोग** ।

**12.** शनि का का अन्न ...............है। **तिल** ।

**बोध प्रश्न-**

18. रोगों का विचार कैसे करते हैं, व्याख्या कीजिए?

19. छठे या आठवें भाव में सूर्यादि ग्रहों के प्रभाव से कौन- कौन से रोग होते हैं?

20. चन्द्रदोष से उत्पन्न व्याधियाँ का वर्णन कीजिए?

21. ज्योतिषाास्त्र के अनुसार नेत्र रोगों का विचार कीजिए।

22. ज्योतिषशास्त्र के अनुसार प्राथमिक रोगोपचार के लिए क्या- क्या करना चाहिए?

# इकाईः 8 कालसर्प योग एवं काल सर्प योग का परिहार

आचार्य पाराशर, वराहमिहिर, वैद्यनाथ एवं मन्त्रेश्वर ने 'कालसर्प ' के विषय में कुछ नहीं बताया है। लेकिन बृहत्पाराशर, बृहज्जातक, जातकपारिजात- फलदीपिका, सारावलि और मानसागरी के योगों में सर्पयोग, काल योग, महाकाल योग, विषयोग, शकट योग, केमद्रुम योगों इत्यादि का वर्णन है। लेकिन कालसर्प योग का वर्णन ही नहीं इन योगों का परिणाम भी महाकष्टकारी होता है। कलियुग में मानवों को इन योगों के वारें में बताया जाता है तो उनको विश्वास नहीं होता है बल्कि विश्वास ही जीवन का आधारस्तम्भ है। इस प्रकार जब वे अन्य विद्वान के पास जाते तो वह विद्वान दो- तीन योग और साथ में बताते हैं। इस प्रकार उनको संशय होता रहता है कि उन्होंने शकट योग बताया, इन्होंने सर्पयोग एवं कालयोग और जोड़ दिए। इस समस्या को दूर करने के लिए पूर्वाचार्यों के मत का अनुशरण करते हुए आधुनिक ज्योतिषियों ने उन योगों को एक ही नाम दे दिया है **कालसर्प योग** क्योंकि ज्योतिषियों का परम उद्देश्य है समाज को सुखी एवं समृद्ध बनाना। यह योग जीवन में अवश्य फलित होता है परन्तु यह इस पर निर्भर करता है कि राहु केतु के मध्य में यदि कोई ग्रह नहीं हो तो उसके अनुसार इसका परिणाम न्यून हो सकता है। राहु और केतु जिस भाव में कालसर्प बनाते हैं, उसका फल शान्ति नहीं कराएँ तो जीवन में समयानुसार परिणाम प्रतीत हो सकता है।

**राहु - केतु ग्रहों का परिचय-** राहु का जन्म नक्षत्र भरणी है। जिसका अधिदेवता काल है। समुद्र मन्थन के समय शिरोच्छेदन से केतु की उत्पत्ति हुई उसका जन्म नक्षत्र आश्रेषा तथा अधिदेवता सर्प है। अत: राहु-केतु जनित दोष को "कालसर्प " दोष की संज्ञा दी गई है। राजा बलि के सेनापति विप्रचित्त का पुत्र राहु हुआ जो सर्पित आकार का था। राहु की माता का नाम सिंहिका था। समुद्र मन्थन के समय राहु ने अमृत पान किया तो भी उसका मस्तक कट गया, उसी तरह जिसकी कुण्डली में कालसर्प योग हो तो उसको कुछ समय कष्ट अवश्य देता है।

**8.1.कालसर्प योग-** राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो कालसर्प योग होता है। ऐसा विद्वानों का मत है अर्थात् **राहु- केतु के मध्य में अन्य ग्रह होंने से, यह योग दूसरे ग्रहों के प्रभाव को समाप्त कर देता है।**

यह कालसर्प योग राजयोग के साथ- साथ सन्तान के लिए भी हानिकारक होता है। इसके कारण शाप के कारण जायमान दुःख का भी अधिक प्रभाव पड़ता है।

**कालसर्प योग के सकारात्मक प्रभाव**

ज्योतिष शास्त्र राहु-केतु की धुरी को "'कार्मिक धुरी" मानता है और यह धुरी हमारे पूर्व जन्मों के कर्मों को दर्शाती है। प्राय: देखा जाता है कि यदि परिवार में किसी एक सदस्य के कालसर्प योग है तो अन्य सदस्यों के भी पूर्ण या आंशिक कालसर्प योग दोष होगा। यह हमारे पूर्वजों के "ऋणानुबन्धन " के कारण है।

कालसर्प दोष युक्त मनुष्य हमेशा धन, परिवार, सन्तान, चिन्ता से ग्रसित रहता है। जीवन में कई उतार चढ़ाव भी आते रहते हैं।

कुण्डली में राजयोग या ग्रहों की उच्च स्थितियाँ हो तो प्रारम्भिक बाधाओं के बाद व्यक्ति नई ऊँचाइयों को छूता है। अभिशिप्त जीवन की जगह ऐश्वर्य युक्त जीवन जीता है। दुष्ट बाधाओं को पार करनें पर, कालसर्प शान्ति के बाद तथा दशा भोग काल के बाद कालसर्प के सकारात्मक प्रभाव भी दिखाई देते हैं। अतः भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है।

**कालसर्प दोष के प्रकार व लग्नादि द्वादश भावों के अनुसार कालसर्प विचार-** लग्न से सप्तम में कालसर्प योग हो तो गृह की स्त्रियों में अकारण कलह होती है तथा घर में अशान्ति बनी रहती है। अनेक चिन्ताओं के कारण स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ता है। मन में सदैव नकारात्मक प्रश्न उत्पन्न होकर सकारात्मक सोच समाप्त हो जाती है। जीवन से घृणा करने लगता है। कोई कार्य प्रारम्भ करने का साहस नहीं रहता। अनेकानेक बीमारियों व दुर्घटनाओं का शिकार बनता जाता है। दवा लेने पर भी दवा से भी कोई लाभ नहीं मिलता है। अचानक मित्र ही शत्रु होते जाते हैं। अच्छे कार्यों का परिणाम दूसरों को प्राप्त होता है। धर्म के कार्यों में मन नहीं लगना। सदैव आलस्य आना, संतान नहीं होना, गर्भपात की समस्या और शरीर में विकलता ये सभी समस्या पूर्वजन्म या वर्तमान जन्म के कारण ही उत्पन्न होती हैं। आचार्य कालसर्प दोष एवं आंशिक कालसर्प दोष के बारे में बताते हैं लेकिन जीवन में कुण्डली के बारह भावों के अनुसार कालसर्प योगों का प्रभाव देखने को अवश्य मिलता है-

1. **अनन्त कालसर्प योग-** लग्न में राहु एवं सप्तम भाव में केतु अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो कालसर्प योग होता है।

**अनन्त कालसर्प योग का प्रभाव-** वैवाहिक व गृहस्थ जीवन में मानसिक प्रताडना, कार्यों में असफलता, दुर्घटना, कोर्ट में धन व्ययादि समस्याएँ आती हैं। दोष शान्ति से सकारात्मक फल प्राप्त होते हैं। यदि राहु वृष या मिथुन राशि में हो तो राहु उच्च राजयोग देता है।

2. **कुलिक कालसर्प योग**- धन भाव से अष्टम भाव तक अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो कालसर्प योग होता है।

**कुलिक कालसर्प योग का प्रभाव-** राहु-केतु ग्रह पहले जीवन में धन लाभ दें तो उत्तरार्ध खराब रहता है अर्थात् धन एवं स्वास्थ्य की समस्या बनी रहती है। सम्बन्धियों से धन या सम्पति के विषय में कलह, धन का पारिवारिक कलह, अपयश, दाम्पत्य कलह, यदि पहले दु:ख प्राप्त हो तो मध्यायु बाद सुख देता है। राहु वृष या मिथुन का हो तो धन, कुटुम्ब की वृद्धि, गढ़ा धन, लॉटरी से भी अचानक धन दिलाता है।

3. **वासुकी कालसर्प योग-** तृतीय भाव में राहु तथा नवम भाव केतु हो अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो वासुकी कालसर्प योग होता है।

**वासुकी कालसर्प योग का प्रभाव-** बन्धु कलह, प्रतिवेसिक समस्या आजीविका में असफलता, शेयर्स में नुकसान। भयंकर स्वप्न, या स्वप्न में में सर्प अधिक दिखना, विदेश यात्रा, केतु उच्च स्थानस्थ होकर भाग्येश, पञ्चमेश, राज्येश से युत हो एवं राहु वृष या मिथुन का हो तो साम्राज्य योग प्रदान करता है। इस जातक को हनुमान, भैरव या कार्तिकेय की उपासना करनी चाहिए।

4. **शंखपाल कालसर्प योग-** राहु चतुर्थ भाव में एवं दशम भाव में केतु अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो शंखपाल कालसर्प योग होता है।

**शंखपाल कालसर्प योग का परिणाम-** वाहन सुख का अभाव, माता- पिता को कष्ट, आजीविका और व्यवसाय में दुःख, पितृदोष, कर्ज, हृदय रोग, , तलाक, पत्नि वियोग,राहु चतुर्थ भाव में वृष का मिथुन का हो एवं चतुर्थेश बलवान हो तो व्यक्ति कुछ समय कष्ट बाद में उन्नति होती है लेकिन मानसिक चिन्ता एवं रोग उसे अवश्य बने रहते हैं।

5. **पद्मकालसर्प योग-** राहु पञ्चम भाव में एवं केतु एकादश भाव में हो और इस योग में राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो पद्म कालसर्प योग होता है।

**पद्मकालसर्प योग का प्रभाव**- सन्तान कष्ट, अनेकानेक रोग, पेट सम्बन्धित स्वास्थ्य समस्या, विद्याध्ययन हेतु विदेश यात्रा, विद्या में अवरोध, संतान चिन्ता, गर्भपात, वाणी से कलह, क्रोधी , जादू, टोना, मित्रों से कलह, स्त्री के मासिक धर्म की समस्या आदि। पञ्चमेश बलवान हो, उच्च राशिस्थ हो, राहु वृष या मिथुन में हो तो विलम्ब से संतान होती है लेकिन वह तन्त्र-मन्त्र-ज्योतिष तथा गुप्त विद्याओं का ज्ञाता होता है। अपने कुल में उत्पन्न व्यक्ति का दोष हो तो नारायण बलि तथा पितृ श्राद्ध कराने से उन्नति अवश्य होती है।

6. **महापद्म कालसर्प योग-** राहु षष्ठ भाव में एवं द्वादश भाव में केतु हो अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो महापद्म कालसर्प योग होता है।

**महापद्म कालसर्प योग का प्रभाव-** दाम्पत्य कलह, क्रोध की अधिकता, मानसिक तनाव, शत्रु हानि इत्यादि परेसानियों का सामना करना पड़ता है। यदि षष्ठेश उच्च राशि का हो तथा बलवान हो, राहु उच्च का हो तो शत्रुओं पर विजय दिलाता है। नौकरी राजपक्ष सही रहता है और विदेश यात्रा भी कराता है। वृथा वादविवाद मुकद्दमेबाजी, चोरी, डकेती, से धन हानि, आर्थिक परेशानी तथा अकारण भ्रमण, बीमारी के कारण खर्चा, व्यापार की अपेक्षा नौकरी ठीक, नौकरी में विवाद, पदोन्नति समस्या, कार्यों में रुकावट, आदि। शिव एवँ गणपति की पूजा करें।

7. **तक्षक कालसर्प योग-** सप्तम में राहु लग्न में केतु हो अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह आ जाए तो ये योग होता है।

**तक्षक कालसर्प योग का प्रभाव**- विवाह में विलंब, दाम्पत्य कलह, धन व्यय, साझेदारी में परेशानी, व्यापार में हानि, उदर रोग, माता-पिता से झगड़ा, प्रेम तथा व्यापार में धोखा, पैतृक सम्पत्ति नष्ट इत्यादि समस्याएँ राहु वृष या मिथुन का हो, सप्तमेश उच्च का हो, भाग्येश धनेश से युत हो तो साझेदारी में लाभ होता है।

8. **कर्कोटक कालसर्प योग-** अष्टम भाव में राहु और द्वितीय भाव में केतु हो अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह हों तो यह योग होता है।

**कर्कोटक कालसर्प योग का प्रभाव**- आजीविका में अवनति, पैतृक सम्पति में कलह, अकाल मृत्यु, अनेक रोग, व्यापार हानि, आयु, स्वास्थ्य, धन की समस्या, स्वास्थ्य में अस्थिरता, आयु वृद्धि, रोग भूतप्रेत बाधा, इत्यादि समस्या उत्पन्न होती हैं। यदि राहु उच्च का हो, धनेश व भाग्येश का

आपस में सम्बन्ध हो तो जातक पूर्व अवस्था में दु:खी , मध्यायु के पश्चात् धनलाभ होता है यानि अचानक धन लाभ कराता नौकरी, व्यापार में स्थान परिवर्तन, विदेश यात्रा, धन अर्जन, परिवार में कलह, दूसरे भाव में पाप ग्रह हों तथा उसमें सूर्य चन्द्र हो तो पति-पत्नि को कष्ट। शनि मंगल साथ हो या उनमें षडाष्टक योग हो तो दुर्घटना आदि हो तो ऐसे व्यक्ति को भैरव उपासना करनी चाहिए।

9. **शंख कालसर्प योग-** राहु नवम भाव में और तृतीय भाव में केतु अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह हों तो यह योग होता है।

**शंख कालसर्प योग का प्रभाव**- धन हानि, बन्धुकलह, व्यापार एवं आजीविका में प्रताडना, पिता कष्ट धर्मपरिवर्तन, धर्म कर्म में रुचि एवं विघ्न, नौकरी में पदोन्नति की समस्या, बृहस्पति निर्बल हो तो पूर्वजों से सम्बन्धित समस्या, तन्त्र मन्त्र  से परेशानी, जीवन में उन्नति करता है तो वृद्धावस्था में संतान एवं स्त्री के कारण चिन्ता, धन हानि, वैमनस्यता, पिता का सुख अधिक नहीं, माता-पिता से वैमनस्यता इत्यादि। राहु मिथुन या वृष राशि का हो एवं भाग्येश, कर्मेश बलवान हो तो उत्तम धन  लाभ हो सकता है तथा जातक हनुमान जी की आराधना से अपने कार्यों में सफलता पाता है।

10. **पातक कालसर्प योग-** राहु दशम भाव में तथा केतु चतुर्थ भाव में अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह हों तो यह योग होता है।

**पातक कालसर्प योग का प्रभाव**-  आजाविका तथा व्यापार में  परेशानी,  पितृओं को कष्ट, असफलता, माता-पिता से कलह,  नौकरी में  आरोप –प्रत्यारोप, स्थान परिवर्तन, कभी उन्नति कभी हानि,  पैतृक सम्पत्ति में वाद-विवाद, व्यवसाय अपयश आदि इस योग में यदि सप्तम स्थान में सूर्य, चन्द्र हो बृहस्पति शुक्र की पूर्ण युति हो अथवा बृहस्पति शुक्र में षडाष्टक योग हो या बृहस्पति राहु में षडाष्टक योग हो तो स्त्री सुख में हानि या फिर तलाक।  वहीं यहि राहु उच्च का या वृष का हो, लग्नेश, भाग्येश, दशमेश, पञ्चमेश का योग हो तो उच्च राजयोग देता और समाजसेवा कराता है।

11. **विषाक्त कालसर्प योग-** एकादश भाव में राहु तथा पञ्चम भाव में केतु हो अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह हों तो यह योग होता है।

**विषाक्त कालसर्प योग का प्रभाव**- मातृकष्ट, भातृ कलह, पैतृक सम्पति की हानि, नेत्र रोग, हृदय, सन्तान पीड़ा, विदेश भ्रमण यदि उच्च या वृष का राहु अभीष्ट की पूर्ति करता है। स्मरण शक्ति व मानसिक परेशानी, विद्या में व्यवधान, संतान चिन्ता, सन्तान को भविष्य में संघर्ष, परिवार में अकारण कलह, , गलत निर्णय से दुःख, सट्टा, शेयर्स में धन सदैव हानि, गुप्त सम्बन्ध, तीव्र क्रोध, प्रेतादि समस्या से दुखी रहता है। लाभेश के बलवान होने पर आय के अनेक साधन बनते हैं और युवावस्था में अधिक लाभ होता है।

12.**शेषनाग कालसर्प योग**- राहु द्वादश भाव में और षष्ठ भाव में केतु अर्थात् राहु-केतु के मध्य में सभी ग्रह हों तो यह योग होता है।

**शेषनाग कालसर्प योग का प्रभाव**- अपयश, नेत्रपीड़ा, शत्रुभय इत्यादि समस्या, अधिक खर्च, नुकसान, चोरी, डकैती का भय, भ्रमण, कार्यस्थल परिवर्तन, राजदण्ड व मुकद्दमों के कारण धन हानि किन्तु लग्नेश, भाग्येश, राज्येश बलवान योग कारक हों एवं राहु वृष या मिथुन में हो तो उच्च पद, प्रतिष्ठा, राजनेता एवं विदेश यात्रा कराता है। अकारण यदि बारहवें भाव में शुभ ग्रह हो तो जीवन भर संघर्ष तथा विदेश यात्रा तथा मरणोपरान्त प्रसिद्धि।

1. **शेषनाग कालसर्प योग**- **कालसर्प योग का काल**- कालसर्प योग का प्रभाव अधिकतर राहु-केतु की महादशा में या अन्तर दशा में होता है। किसी- किसी की कुण्डली में ऐसा होता है, कि राहु महादशा उनके जीवन में आती ही नहीं है। अतः राहु-केतु अन्तर-प्रत्यन्तर दशा में ही उनको इसका फल मिलता है। जीवन का पूर्वार्द्ध सुखी। कालसर्प योग पूर्व जन्म के कर्मो के अनुसार अच्छा या अशुभ परिणाम मिलता है। यदि कुण्डली में राजयोग है तो जातक उन्नति अवश्य करेगा परन्तु जिस घर में कालसर्प योग बना है, उस भाव के सम्बन्ध में चिन्ता अवश्य देगा। सूर्य, चन्द्र, गुरु के साथ युति एवं षडाष्टक भाव का राहु, केतु और शनि से योग होने के कारण शाप का प्रभाव अधिक रहता है। अतः कुण्डली में ऐसे योग हों तो राहु की शान्ति अवश्य करानी चाहिए। ग्रह शान्ति प्रयोगों में ग्रहों के साथ उनके अधिदेवता, होम विधान आदि की सहायता से दोषों की की शान्ति की जाती है। उसी प्रकार राहु के देवता एवं अधिदेवता सर्प है। अत: शान्ति करने से कालसर्प दोष समाप्त हो जाता है।

**राहु- केतु के साथ अन्य ग्रहों की युति का प्रभाव-** राहु-केतु के साथ यदि कोई ग्रह हो तो राहु के प्रभाव में न्यूनता आ जाती है। यदि राहु- केतु के साथ शुभ भाव का स्वामी हो तो राहु-केतु अपने साथ स्थित रहने वाले ग्रह से सम्बन्धित ही फल देते हैं। अतः कारक ग्रह के साथ होने पर कालसर्प दशा हानि-कारक नहीं होगी।

**कालसर्प का बलाबल विचार-** कालसर्प दोष होने पर कालसर्प का बलाबल विचार कर फलादेश करना चाहिए क्योंकि कुण्डली में कालसर्प योग होने पर सुख-सुविधाओं से सम्पन्न होकर सामाजिक कार्य करते हुए जातक को विश्व में प्रसिद्धि दिलाता हैं क्योंकि राहु-केतु कर्म के साक्षी हैं। यह ग्रह व्यक्ति को जन्म जन्मान्तर का अवलोकन कराकर संघर्ष कराना सिखाते हैं और न्यायधीश शनि हमारे एवं हमारे पूर्वजों के पूर्वजन्मों के दोषों का दण्ड तथा शुभ कर्मों का न्याय रूपी फल अपनी दशा, साढ़ेसाति एवं ढैया में अवश्य देते हैं।

यदि कुण्डली में केतु बारहवे भाव में हो तो केतु को मोक्ष का दाता कहा है, अर्थात् केतु भावी जन्मकर्म का कारक भी है। राहु को मोह का कारण माना गया है। अतः भूत व भविष्य कर्म के अंधकार बिन्दुओं पर छाया ग्रह राहु-केतु का भी अधिकार है। राहु-केतु उच्च के शुभ स्थान में हो तो उन्नति कारक होते हैं। राहु एवं केतु के राशि स्वामी ग्रह हमारे कर्मों में विशेष महत्त्व रखते हैं। यदि कालसर्प योग है परन्तु इनके राशि स्वामी आपस में केन्द्र, नवम व पञ्चम में हो अथवा कुण्डली में शुभ स्थानों में बैठे हो तो जीवन में विशेष उन्नति होगी चाहे कैसे ही कमजोर ग्रह क्यों न हो। अत: राहु-केतु के राशि स्वामियों को हमारे कर्मसाक्षी ग्रह मानना चाहिए। इन ग्रहों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए तथा स्थिति को देखकर कुण्डली में कालसर्प का शुभाशुभ निर्णय करना चाहिए।

**कालसर्प दोष का परिहार-** ज्योतिषशास्त्र के आचार्यों ने कुयोगों के साथ-साथ उनकी शान्ति के लिए भी अनेक मार्गों का उल्लेख किया हैं। जैसे मन्त्रविधान, तन्त्रशास्त्र, रत्नशास्त्र, पूजाविधान, समाजसेवा तथा औषधियों के द्वारा शान्ति के अनेकानेक उपायों का वर्णन किया है ज्योतिर्लिंग उपासना, बटुकभैरव उपासना तथा हनुमत् उपासना कालसर्पयोग की शान्ति हेतु द्वादश ज्योतिर्लिंग - सोमनाथ, श्रीमल्किार्जुन, श्रीमहाकाल, श्री ओंकारेश्वर, श्रीवैद्यनाथ, श्रीभीमशङ्कर, श्रीरामेश्वरम्, श्रीनागेश्वर, श्री विश्वनाथ, श्रीत्रयम्बकेश्वर, श्रीकेदारनाथ और श्रीघुमेश्वर की अराधना, दर्शन तथा नामस्मरण मात्र से

सात जन्मों के प्रारब्ध पापों का नाश हो जाता है। अतः इन ज्योतिर्लिंगों की शिवार्चन तथा रूद्राभिषेक करने से कालसर्पयोग दोष समाप्त हो जाता है।

## द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्रम्

सौराष्ट्रदेशे विशदेऽतिरम्ये ज्योतिर्मयं चन्द्रकलावतंसम्।
भक्तिप्रदानाय कृपावतीर्णं तं सोमनाथं शरणं प्रपद्ये ।।1।।
श्रीशैलशृङ्गे विबुधातिसङ्गे तुलाद्रितुङ्गेऽपि मुदा वसन्तम्।
तमर्जुनं मल्लिकपूर्वमेकं नमामि संसारसमुद्रसेतुम् ।।2।।
अवन्तिकायां विहितावतारं मुक्तिप्रदानाय च सज्जनानाम्।
अकालमृत्योः परिरक्षणार्थं वन्दे महाकालमहासुरेशम् ।। 3 ।।
कावेरिकानर्मदयोः पवित्रे समागमे सज्जनतारणाय।
सदैव मान्धातृपुरे वसन्तमोङ्कारमीशं शिवमेकमीडे ।।41
पूर्वोत्तरे प्रज्वलिकानिधाने सदा वसन्तं गिरिजासमेतम्।
सुरासुराराधितपादपद्मं श्रीवैद्यनाथं तमहं नमामि ।। 5 ।।
याम्ये सदङ्गे नगरेऽतिरम्ये विभूषिताङ्गं विविधैश्च भोगैः।
सद्भक्तिमुक्तिप्रदमीशमेकं श्रीनागनाथं शरणं प्रपद्ये ।।6।।
महाद्रिपार्श्वे च तटे रमन्तं सम्पूज्यमानं सततं मुनीन्द्रैः।
सुरासुरैर्यक्षमहोरगाद्यैः केदारमीशं शिवमेकमीडे ।।7 1।
सह्याद्रिशीर्षे विमले वसन्तं गोदावरीतीर पवित्रदेशे।
यद्दर्शनात्पातकमाशु नाशं प्रयाति तं त्र्यम्बकमीशमीडे ।।8।
सुताम्रपर्णी जलराशियोगे निबध्य सेतु विशिखैरसंख्यैः।
श्रीरामचन्द्रेण समर्पितं तं रामेश्वराख्यं नियतं नमामि ।19।।
यं डाकिनीशाकिनिकासमाजे निषेव्यमाणं पिशिताशनैश्च।
सदैव भीमादिपदप्रसिद्धं तं शङ्करं भक्तहितं नमामि ।।10।।
सानन्दमानन्दवने वसन्त मानन्दकन्दं हतपापवृन्दम्।
वाराणसीनाथमनाथनाथं श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये ।।11।।

इलापूरे रम्यविशालकेऽस्मिन् समुल्लसन्तं च जगद्वरेण्यम् ।
वन्दे महोदारतरस्वभाव घृष्णेश्वराख्यं शरणं प्रपद्ये ।।12।।
ज्योतिर्मयद्वादशलिङ्ङ्गकानां शिवात्मनां प्रोक्तमिदं कमेण।
स्तोत्रं पठित्त्वा मनुजोऽतिभक्त्या फलं तवालोक्य निजं भजेच्च ।।।3 ।।

जो अपनी भक्ति प्रदान करने के हेतु अत्यन्त मनोहर एवं निर्मल सौराष्ट्र प्रदेश (कठियावार) में दयापूर्वक अवतीर्ण हुए हे, चन्द्रमा जिनके मस्तक का आभूषण है, उन ज्योतिर्लिङ्गस्वरूप भगवान श्रीसोमनाथ की शरण में में जाता हैं।।1।। जो ऊँचाई के आदर्शभूत पर्वतों से भी बढ़कर ऊँचे श्रीशेल के शिखर पर, जहाँ देवता प्रसन्नतापूर्वक निवास करते हैं और जो संसार सागर से पार कराने के लिए सेतु के समान हैं, उन एकमात्र प्रभु मल्लिकार्जुन को में नमस्कार करता हूँ।।2।। संतजनों को मोक्ष देने के लिए जिन्होंने अवन्तिपुरी (उज्जैन) में अवतार धारण किया है, उन महाकाल नाम से विख्यात महादेवजी को में अकालमृत्यु से रक्षा करने के लिए नमस्कार करता हूँ।।3।। जो सत्पुरुषों को संसार सागर से पार उत्तारने के हेतु कावेरी और नर्मदा के पवित्र संगम वो निकट मान्धाता के पुर में सदा निवास करते हैं, उन अद्वितीय कल्याणमय भगवान् ॐकारेश्वर का में स्तवन करता हूँ।।4।। जो पूर्वोत्तर दिशा में चिताभूमि (वैद्यनाथधाम) वो भीतर सदा ही गिरिजा के साथ वास करते हैं, देवत्ता और असुर जिनके चरण कमलों की आराधना करते हैं, उन श्रीवैद्यनाथ को में प्रणाम करता हूँ।।5।। जो दक्षिण के अत्यन्त रमणीय सदङ्ग नगर में विविध भोगों से सम्पन्न होकर सुन्दर आभूषणों से भूषित हो रहे हैं, जो एकमात्र सद्भवित्त और मुक्ति को देनेवाले हैं, उन प्रभु श्रीनागनाथ की में शरण में जाता हैं।।6।। जो महागिरि हिमालय के पास केदारभूङ्ग के तट पर सदा निवास करते हुए मुनीश्वरों द्वारा पूजित होते हैं और देवता, असुर, यक्ष और सर्प आदि भी जिनकी पूजा करते हैं, उन एक कल्याणकारी भगवान् केदारनाथ का में स्तवन करता हूँ।।7।। जो गोदावरी तट के पवित्र देश में सह्यपर्वत के विमल शिखर पर वास करते हैं, जिनके दर्शन मात्र से ही शीघ्र पातक नष्ट हो जाता है, उन श्रीत्र्यम्बकेश्वर का में स्तवन करत्ता हूँ।।8।। जो भगवान् श्रीरामचन्द्रजी के द्वारा लाखपर्णी और सागर के संगम में अनेक बाणों द्वारा पुल बाँधकर स्थापित किए गये, उन श्रीरामेश्वर को में नियम से प्रणाम करता हूँ।।9।। जो डाकिनी और शाकिनीवृन्द में प्रेतों द्वारा सदैव सेवित होते हैं, उन भवतहितकारी भगवान् भीमशंकर को में प्रणाम करता हूँ।।10।। जो स्वयं आनन्दकन्द है और आनन्दपूर्वक आनन्दवन (काशीक्षेत्र) में वास करते है, जो पापसमूह के

नाश करनेवाले हैं, उन अनाथो के नाथ काशीपति विश्वनाथ की शरण में में जाता हूँ।।।।।। जो इलापुर के सुरम्यमन्दिर में विराजमान होकर समस्त जगत् के आराधनीय हो रहे हैं, जिनका स्वभाव बड़ा ही उदार है, उन घृष्णेश्वर नामक ज्योतिर्मय भगवान् शिव की शरण में में जाता हूँ।।12।। यदि मनुष्य क्रमश उक्त इन द्वादश ज्योतिर्मय शिवलिङ्गों के स्तोत्र का भक्तिपूर्वक पाठ करे तो इनके दर्शन से होनेवाला फल प्राप्त कर सकता है।।13।। इति श्रीद्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

यथा- कालसर्प दोष एवं शाप योगों का निर्णय करते हैं, उसी आधार पर शान्तिकर्म का भी निर्णय करना चाहिए। जैसे- संतान चिन्ता में सर्पशाप योग है तो नागबलि कर्म तथा नागदोष शान्ति के उपाय अवश्य करना चाहिए। यदि परिवार के किसी पितृ का शाप है तो नारायणबलि कर्म, तर्पण, पितर स्तोत्रपाठ, गीता-भागवत पाठ करना शुभ है। देवदोष, गौहत्या, गुरु, ब्राह्मण आदि के शाप हेतु गोदान, गायत्री जप, घट दान एवं राहु की शान्ति करानी चाहिए। राहु-केतु के 40-40 हजार जप कराएँ। 40 हजार सर्पमंत्र के जप, 25 हजार नागसहस्रनाम स्तोत्र के 200 पाठ, शिवलिंग पर रजत या ताम्र का सर्प चढ़ाएँ एवं रूद्राभिषिक कराएँ। यदि सर्प प्रवाहित करने हैं तो आठ सर्प चाँदी के एवं एक सर्प का जोड़ा स्वर्ण का लें तदोपरान्त शिव के पास आठों दिशाओं में आठों चाँदी के सर्पजोडों को तथा स्वर्ण सर्प को भी रखकर रुद्राभिषिक और नाग पूजा करें। पूजा करने के बाद सभी आठों सर्प जोड़ों को बहते जल में प्रवाहित कर दें एवं स्वर्ण के सर्प जोड़े को का दान करें या फिर शिव को अर्पित कर दें।

पितृ दोष होने पर पितृस्तोत्र , गीता, भागवत पाठ, पितर तर्पण, एवं श्राद्धादि कार्य कराने चाहिए।

पुष्टि हेतु मृत्युञ्जय मन्त्र का जप 40-51 हजार की संख्या में कराएँ।

वंशवृद्धि, देव, ब्राह्मणशाप निवृत्ति हेतु हरिवंशपुराण का पाठ व गोदान कराएँ। पाप क्षय एवं वंशवृद्धि हेतु पार्थिवशिव पूजन प्रयोग करें। नन्दिपुराण के अनुसार प्रत्येक वार के अनुसार पार्थिव शिवों की आकृति व नागों की भैरव उपासना से सम्बधित प्रयोग करें क्योंकि भैरव महाकाल राहु के अधिदेवता हैं।दरिद्रता निवारण हेतु जेष्ठा लक्ष्मी से प्रार्थना करें कि हे दरिद्रे आप हमारे घर से चली जाए तथा शुभलक्ष्मी की प्राप्ति का आशीर्वाद दें। धूमावती उपासना भी इसी तरह करें। ग्रहों का दोष हमारे कर्म के छिद्र है अतः ग्रहों के उपाय के बाद ही धनप्राप्ति हेतु श्रीसूक्त पाठ, स्वर्णाकर्षण भैरव प्रयोग अवश्य करें। मनसा देवी स्तोत्र पाठ, गरुडमन्त्र प्रयोग भी सर्पदोष दूर करते हैं। कुब्जिका देवी आठो सर्पो को आभूषण

रूप में धारण करती है उनका जप करें। संकट के समय तुलादान विधि कही है, राहु के साथ शनि भी हों तो शिव के साथ महाकाली का पूजन करें। दुर्गासप्तशती का पाठ करें।

**कालसर्प योग के प्रभाव को सामान्य करने वाले योग-**

मानव सेवा ही सच्ची सेवा है और कालसर्प योग भी ऐसे लोगों को समान्य कष्ट देकर मार्गदर्शन करता है जैसे- महात्मा गाँधी, सरदार वल्लभ भाई पटेल, जवाहरलाल नेहरु, महर्षि महेश योगी, धीरूभाई अम्बानी इत्यादि की कुण्डली में कालसर्प योग था लेकिन यह योग उन्नति कारक बना। कालसर्प का फल भावों के अनुसार अवश्य भोगना पड़ा लेकिन उसके साथ राजयोग के कारण उन्नति के शिखर तक पहुँचे। यथा-

जैसे- 1, 2, 7, 12 वें भाव में कालसर्प योग बन रहा हो तो स्त्री से तनाव तथा 2, 3, 5, 6 भाव में काल सर्प योग बन रहा हो तो परिवार में मतभेद और संतान सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। लेकिन राजयोग, भाग्यवान, लक्ष्मीयोग व गजकेसरी योग हों तो अशुभ फल को सामान्य करकर उसकी उन्नति अवश्य कराते हैं।

राहु-केतु के मध्य में 4 या 5 भावों में ग्रह हों। यह योग मालिका योग कहलाता है। जो उन्नति अवश्य देता है।

सूर्य- चन्द्र- मङ्गल- बुध- बृहस्पति व शनि स्वराशि या उच्च के हों तो कालसर्प योग के प्रभाव को सामान्य कर जीवन में उन्नति करते है।

जो ग्रह नीच का हो उसका राशि स्वामी यदि उच्च का हो तो कालसर्प योग के प्रभाव कम करता है।

7, 5, 6, 7 अथवा 6, 7, 8 वें भावों में ग्रह रहने से कूर्म योग होता है तो यह जीवन में सफलता देता है।

जिन व्यक्तियों के कालसर्प दोष होता है 'उसंके परिवार के अन्य व्यक्तियों की कुण्डली में भी यह योग पाया जाता है। अत: परिवार में पूर्वज को असद्गति के कारण या पैशाचिक समस्याओं के कारण, भी जातक इससे पीड़ित हो सकता है। इसके लिये नारायणबलि कर्म अथवा नागुबलि कर्म कराना चाहिए। पूर्वजों द्वारा किये गये पापों का भुगतान भी उनके वंशजों को करना पड़ता है। पूर्वजों द्वारा अन्याय पूर्वक कमाया गया धन आने वाली पीढियों को बर्बाद कर सकता है। जिनके पूर्वजों ने पुण्य कार्य किये हो तो उनके वंशज सुखी रहेंगे। सत्यवादी, सात्विक तथा सत्कर्म करने वाले पर इसका प्रभाव न्यून होता है।

मदिरा, माँस, परस्त्री संग तथा दुराचार का आश्रय लेने वाला व्यक्ति अधिक दुःखी होगा। कुण्डली में छत्र योग का निर्माण हा रहा हो तो कालसर्प दोष कम हो जाता है।

यदि जन्मकुण्डली में चन्द्रमा के आगे-पीछे अथवा साथ में कोई ग्रह नहीं हो तो केमद्रुम योग होने से कालसर्प का प्रभाव बढ़ेगा। इसी प्रकार कुण्डली में शकट योग हो तो भी कालसर्प का प्रभाव बढ़कर व्यक्ति को समस्या व संघर्ष अधिक प्रदान करेगा। अधिकतर ग्रह नीच राशि या शत्रुराशि में हो, यदि लग्नेश सप्तमेश का आपस में केन्द्र, त्रिकोण, राशि परिवर्तन अथवा दृष्टि योग बनाते हों तो जीवन अधिक समय कष्टमय नहीं रहता।

**पुत्रेशो रिपुनीचगोऽस्तमयगो रिःफाष्टमारिस्थित-**

**स्तदवतपुत्रगृहस्थितोऽपि यदि वा टुः स्थानपस्तद्वशात् ।**

**पुत्राभावनिदानमेव कथयेत् तत्खेचराक्रान्तभ-**

**रक्तैदवतभूरुहैरपि मृगैः सन्तानहेतुं वदेत्॥19॥**

**कालसर्प शान्ति के योग-**

- बृहस्पतिवार साधारण है। बुधवार श्रेष्ठ तथा शनि, शुक्र राहु के मित्र होने से शुभ है।
- बुधवार को आश्लेषा नक्षत्र या शनिवार से युक्त अमावस्या का योग हो शान्ति श्रेष्ठ होती है।
- भद्रा, वैधृति योग, व्यतिपात योग, क्षयतिथि, वृद्धि तिथि में, मलमास, अधिकमास एवं क्षयमास का त्याग करें।
- प्रतिपदा, पञ्चमी, सप्तमी, नवमी, पूर्णिमा एवं अमावस्या तिथि शुभ है लेकिन धनिष्ठा नक्षत्र सहित द्विपुष्कर योग निषेध है।
- पञ्चक, पुनर्वसु, कृत्तिका, उत्तराषाढा, पूर्वाषाढा नक्षत्र शुभ नहीं है। भरणी, आश्लेषा, ज्येष्ठा, अश्विनी, मघा, मूल, आर्द्रा, स्वाति शतभिषा एवं पुष्य नक्षत्र शुभ है।
- जिस गोचर में कालसर्प योग चल रहा हो उन दिनों राहु जिस नक्षत्र में हो, वह नक्षत्र भी शान्ति हेतु शुभ रहता है।
- नाग पञ्चमी, अमावस्या को आश्लेषा, आर्द्रा, शतभिषा या स्वाति नक्षत्र योग हो तो शान्ति हेतु शुभ है।

○ शिव सानिध्य में कालसर्प दोष शान्ति कर्म शीघ्र सफल होता है। शिवार्चन, रुद्राभिषेक, पार्थिवशिव पूजा से शिव कृपा द्वारा ग्रह दोष शान्त होता है। इस कर्म की शान्ति हेतु

भारतवर्ष में कुछ प्रधान सिद्ध स्थान है जहाँ इस दोष की शान्ति शीघ्र होती है। लोग एक बार प्रयोग कराने पर जिन्दगी भर दोष मुक्ति की कल्पना कर लेते हैं लेकिन जब जब राहु-केतु की महादशा आए, अन्तर अथवा प्रत्यन्तर दिशा के समय शान्ति कर्म या समाज सेवा श्रद्धा के अनुसार अवश्य कराना चाहिए।

○ त्र्यम्बकेश्वर ज्योतिर्लिंग पर अभिषेक, पूजा, अर्चना से कालसर्प दोष की शान्ति होती है। नाग नागिन का जोड़ा चाँदी के बनवाकर उन्हें जल मे प्रवाहित करें तो पितृदोषादि की भी शान्ति होती है।

○ मुखिया के कालसर्प योग होने पर उसकी सन्तानों में भी यह योग पाया जाता है। अतः पूरा परिवार ही पूर्व शापदोष से शापित होता है। उसकी शान्ति के लिए श्राद्ध, तर्पण, नागबलि नारायणबलि कर्म, पार्थिवशिव पूजन इत्यादि कई कर्म कराने चाहिए।

○ कालसर्प दोष शान्ति हेतु रुद्राभिषिक, शिव पूजन, पार्थिवशिव पूजन, मृत्युन्जय , नागवलि, नारायण बलि, नाग पूजा, रुद्रदेवता पूजन, नागविसर्जन, त्रिपिण्डी श्राद्ध, तर्पण, राहु पूजन,केतुपूजन, तुलादान इत्यादि कई प्रयोग प्रचलित हैं। इसके अलावा भी कई साधारण उपाय हैं।

○ **भवन वास्तु एवं सर्प-**

सृष्टि का आधार शेष नाग को माना गया है। अत: भवन निर्माण के समय नींव में चाँदी के नाग-नागिन का जोड़ा अवश्य रखते हैं। राहु का निवास भूतल में माना गया है। अतः राहु मुख देखकर ही नींव की दिशा तय करते हैं। भवन शिलान्यास करते समय ताम्बे का कलश लेवें उसमें पञ्चामृत, चन्दन का इत्र, जल, पानी वाला नारियल, गरी गोला में मक्खन, मिश्री, शक्कर, सप्तधान्य, चावल, गुड, चन्दन की लकड़ी, वटवृक्ष की साखें, जो, उड़द, दाल, २३ इलायची, 8 लौंग, फल, बच्चे की नाल, यज्ञवेदी की ईंटें, नाग नागिन का जोड़ा, ३ छोटे नाग, सोना एवं चाँदी का टुकड़ा, 5, 9, 11, २१, २७ सुपारी बड़ी, हल्दी की सात गाठें, पुराना सिक्का, शहद, 5, 11, २१, २३ पान के पत्ते रखें तो आने वाली सन्तान का जीवन सुखमय होगा।

**दशापहाराष्टकवर्गगोचरे ग्रहेषु नृणां विषमस्थितेष्वपि।**

**जपेच्च तत्प्रीतिकरैः सुकर्मभिः करोति शान्ति व्रतदानवन्दनैः ॥ (फलदीपिका 49)**

दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग और गोचर में दुःस्थिति में पड़े ग्रहों से उत्पन्न विषम स्थिति के निवारण हेतु उक्त ग्रह के प्रिय मन्त्रों का जप, अनुष्ठानादि सत्कर्म, शान्ति, व्रत, दान, वन्दना आदि से उनको प्रसन्न करना चाहिए।

**अहिंसकस्य दान्तस्य धर्मार्जितधनस्य च।**

**सर्वदा नियमस्थस्य सदा सानुग्रहा ग्रहाः ॥ (फलदीपिका 50)**

जो हिंसा नहीं करता है अर्थात् जो दूसरों को किसी प्रकार का दैहिक, भौतिक, मानसिक किसी प्रकार से प्रताड़ित नहीं करता, जो आत्मनियन्त्रित रहता है, जो धर्ममार्ग से अर्जित धन का उपभोग करता है तथा नित्य नियम, संयमादि का पालन करता है। ऐसे व्यक्ति के प्रति ग्रह सदैव अनुकूल रहते हैं

समाप्त

बोध प्रश्न-

1. कालसर्प दोष का वर्णन करते हुए इसके शमन के उपायों का विवेचन कीजिए?
2. जीवन में कालसर्पदोष से क्या- क्या समस्याएँ आती है, व्याख्या कीजिए?

सन्दर्भग्रन्थसूची


1. जातकपारिजात डा. हरिशंकर पाठक चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2. लघुजातकम् डॉ. कमलकान्त पाण्डेय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

3. मुहूर्तचिन्तामणी रामदैवज्ञ,(पियूषधारा) विघ्नेश्वरी प्रसाद, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

4. सूर्यसिद्धान्त, रामचन्द्र पाण्डेय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

5. लघुपाराशरी, डॉ. सुरकान्त झा, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

6. षट्पञ्चाशिका, आचार्य गुरु प्रसाद गौड., पं, श्रीकृष्ण जुगुनु, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

7. बृहज्जातकम् ( भट्टोपल टीका) चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

8. बृहत्पाराशरहोराशास्त्र, डॉ. पद्मनाथ मित्र, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

9. फलदीपिका, डॉ. हरिशङ्कर पाठक, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

10.कालसर्पयोग शान्ति प्रयोग, रामप्रिय पाण्डेय, , चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

11.प्रश्नमार्ग ,शुकदेव चतुर्वेदी एवं जगन्नाथ भसीन् ,रंजन पब्लिकेशन्स ,नई दिल्ली।

12.अथर्ववेद

# राष्ट्रीय आदर्श वेद विद्यालयों
# वेद पाठशालाएँ तथा गुरु-शिष्य परम्परा इकाइयाँ

**महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)**

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

**महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड**

Vedavidya Marg, Chintaman Ganesh, Post. Jawasia, Ujjain 456006 (M.P.)

दूरभाष/Phone : (0734) 2502255, 2502254

E-mail : msrvvpujn@gmail.com, Website - www.msrvvp.ac.in